खण्ड XI
पुस्तक सं. 8

14.11.1949
से
26.11.1949

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली द्वारा पुनर्मुद्रित

द्वितीय पुनर्मुद्रण 2015

जैनको आर्ट इण्डिया, 13/10, डब्ल्यूईए, करोल बाग, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित

भारतीय संविधान सभा

अध्यक्ष :

माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद

उपाध्यक्ष :

डा. एच.सी. मुखर्जी

संवैधानिक सलाहकार :

सर बी. एन. राव, *सी.आई.ई.*

सचिव :

श्री एच.वी.आर. आयंगर

सी.आई.ई., आई.सी.एस.

संयुक्त सचिव :

श्री एस.एन. मुखर्जी

उप सचिव :

श्री जुगल किशोर खन्ना

अवर सचिव :

प्रो. बाल कृष्ण

मार्शल :

सूबेदार मेजर हरबन्स राय जैदका

Con. 3. XI.1.49
320

अंक XI
संख्या 1

सोमवार
14 नवम्बर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर 3449
संविधान का मसौदा–(जारी) 3449–3519
[अनुच्छेदों का संशोधन]

भारतीय संविधान सभा

सोमवार, 14 नवम्बर, सन् 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टिट्यूशन हाल नई दिल्ली में प्रातः ग्यारह बजे, अध्यक्ष महोदय, माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से दो सदस्यों को शपथ ग्रहण करनी है और रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने हैं।

निम्नलिखित सदस्य महोदय ने शपथ ग्रहण की और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:—

श्री एम.आर. मसानी (बम्बई: जनरल):

संविधान का मसौदा — (जारी)

***अध्यक्ष:** अब हम संविधान के मसौदे पर विचार आरम्भ करेंगे।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इंडोनेशिया के लोगों को एक महान संघर्ष के पश्चात् स्वातन्त्रय प्राप्ति के लिये संविधान-सभा की ओर से संदेश भेजने के सम्बन्ध में मैंने जिस प्रस्ताव की सूचना दी है उस की ओर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। मेरे विचार से उपयुक्त यही होगा कि भारत की ओर से संविधान सभा ही इस सन्देश को भेजे क्योंकि उस ने स्वतन्त्रता प्राप्त की है और वह अब एक संविधान का निर्माण कर रही है। इंडोनेशिया के लोग भी अपने संविधान का निर्माण कर रहे हैं। श्रीमान, यदि मेरे प्रस्ताव पर इस सभा में विचार नहीं हो सका तो मैं आप से प्रार्थना करूंगा कि आप अध्यक्ष के नाते उस देश को एक बधाई का तार भेज दें।

***अध्यक्ष:** जिस प्रस्ताव की सूचना दी गई है उसे मैं संचालन-समिति की एक बैठक में रखूंगा और वह समिति जिन कदमों के लिये मंत्रणा देगी उन कदमों को उठाऊंगा।

अब हमें मसौदा समिति के प्रतिवेदन पर, तथा मसौदा-समिति के किये हुए संशोधनों पर, तथा उन अन्य संशोधनों पर भी विचार करना है जिन की सूचना दी गई है। इस सम्बन्ध में मैं जिस प्रक्रिया का अनुसरण करना चाहता हूं उसकी मैं व्याख्या करुंगा। जब प्रतिवेदन पर विचार करने का प्रस्ताव पारित हो जायेगा तब संशोधन उठाये जायेंगे। जिन संशोधनों की सूचना मसौदा-समिति ने दी है उन के बारे में समझा जायेगा कि वे उपस्थित किये जा चुके हैं और मसौदा-समिति के प्रतिवेदन में जो संशोधन सम्मिलित किये गये हैं उन के सम्बन्ध में रस्मी तौर पर कोई प्रस्ताव उपस्थित नहीं किया जायेगा।

[अध्यक्ष]

मसौदा-समिति ने जो संशोधन किये हैं वे दो प्रकार के हैं। कई संशोधन प्रतिवेदन में सम्मिलित कर दिये गये हैं और माननीय सदस्यों के हाथों में संविधान की जो प्रतियां हैं उन में वे टेढ़े अक्षरों में छपे हुए हैं। मसौदा-समिति ने कुछ अन्य संशोधनों की भी सूचना दी है जो न तो प्रतिवेदन में सम्मिलित किये गये हैं और न संविधान के मसौदे में छापे गये हैं। उन संशोधनों के सम्बन्ध में जो प्रतिवेदन में सम्मिलित किये गये हैं और टेढ़े अक्षरों में छापे गये हैं, सदस्यों को संशोधन भेजने का अवसर मिला है और उन्होंने उन के सम्बन्ध में संशोधनों की सूचना दी है। किन्तु उन नवीन संशोधनों के सम्बन्ध में जिन की सूचना मसौदा-समिति ने अब दी है, सदस्यों को न तो कोई सूचना मिली है और न संशोधनों की सूचना देने के लिये अवसर ही मिला है। उन संशोधनों के सम्बन्ध में, दो संशोधनों की द्वितीय सूची में दिये हुए हैं, मैं कल कार्य आरम्भ करने के पूर्व तक संशोधन भेजने की आज्ञा देता हूं। इस प्रकार कल प्रातः तक, माननीय सदस्यों को इन नवीन संशोधनों पर विचार करने के लिये, तथा यदि वे चाहें तो संशोधनों की सूचना देने के लिये, समय मिल जायेगा। जहां तक इन संशोधनों पर विचार करने की प्रक्रिया का सम्बन्ध है, पिछले सत्र में जिन नियमों को स्वीकार किया गया था उन के अधीन, मेरे विचार से, कोई ऐसा संशोधन, जो मसौदा समिति की ओर से प्रस्तुत संशोधनों से असम्बद्ध होगा, अनियमित होगा। इसलिए मैं ऐसे किसी संशोधन को नहीं उठाऊंगा, जब तक कि किसी संशोधन के सम्बन्ध में मैं यह न देखूं कि अपवाद करने के लिए कोई विशेष कारण हैं। नियमों के अधीन मुझे इस प्रकार स्वविवेक से निर्णय करने की शक्ति प्राप्त है और यदि कोई ऐसा संशोधन भेजा गया जो नियमों के अधीन प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है, किन्तु जो, मेरे विचार से, तर्कयुक्त तथा आवश्यक है तो मैं उसे उपस्थित करने की आज्ञा दे दूंगा। इस समय ऐसे संशोधनों को उपस्थित करने की आज्ञा देने की आवश्यकता नहीं है जो नियमों के अधीन उपस्थित नहीं किये जा सकते। किन्तु मैं इस विषय पर आगे भी विचार करने के लिये तैयार हूं। यदि कोई माननीय सदस्य सभा में नहीं बल्कि लिख कर किसी ऐसे संशोधन की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट करेंगे जिस को वे विशेष महत्व देते हैं तो मैं उस संशोधन पर विशेष रूप से विचार करूंगा और यदि उचित समझूंगा तो उसे उपस्थित करने की आज्ञा दूंगा अथवा आज्ञा नहीं दूंगा।

किसी संशोधन के सम्बन्ध में किसी संशोधन के उपस्थित किये जाने पर, मैं कह नहीं सकता कि सदस्य प्रत्येक ऐसे संशोधन पर पृथक रूप से विचार करना चाहेंगे या नहीं क्योंकि हमारे पास बहुत कम समय है और सभी संशोधनों को निबटाने का कार्य परसों एक बजे तक समाप्त कर दिया जाना चाहिये। नियमों के अधीन मैं इस कार्य के लिये केवल दो दिन दे सकता था किन्तु सदस्यों की सुविधा के लिये मैंने कुछ समय अधिक दे दिया है और इस कार्य के लिये बुधवार को एक बजे तक का समय रखा है। मैंने यह इसलिये किया है कि मैं समझता हूं कि प्रस्ताव पर प्रारम्भिक विचार-विमर्श पर आज कुछ समय लग जायेगा और यह उचित नहीं होगा कि सदस्यों को सब संशोधनों पर विचार करने के लिये दो दिन से कम समय दिया जाये। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि यदि कोई

सदस्य अपने किसी संशोधन के सम्बन्ध में बोलना चाहे तो वह कम से कम समय ले ताकि अन्य सदस्यों के लिये अधिक समय मिल सके।

मुझे आशा है कि मसौदा-समिति के संशोधनों के सम्बन्ध में सूची 2 में दिये हुए संशोधनों के अतिरिक्त जो संशोधन हैं वे सब आज उपस्थित कर दिये जायेंगे और कल हम संशोधनों की सूची 2 के संशोधनों को उपस्थित करेंगे। कल हम सभी संशोधनों पर बहस कर सकते हैं। मुझे उन सब पर परसों बारह बजे तक मत लेना चाहिये और एक बजे तक मतदान समाप्त कर देना चाहिये। मैं इस प्रक्रिया का अनुसरण करना चाहता हूं। मुझे आशा है कि इससे सभी महत्वपूर्ण संशोधनों पर विचार-विमर्श किया जा सकेगा और कार्य शीघ्र समाप्त किया जा सकेगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैं जानना चाहता हूं कि क्या आज दो बैठकें होंगी।

***अध्यक्ष:** हम कल से प्रत्येक दिन दस बजे से एक बजे तक और फिर तीन बजे से पांच बजे तक बैठेंगे।

***श्री आर.के. सिधवा:** आज भी हम ऐसा ही क्यों न करें।

***अध्यक्ष:** जी हां, आज भी हम यही करेंगे।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): संविधान के दुहराये हुए मसौदे के सम्बन्ध में जो संशोधन हैं उन पर विचार करने के लिये पिछले सत्र में सभा द्वारा स्वीकृत नियमों के अधीन जो समय निश्चित किया गया है उस के बारे में मेरा निवेदन है कि आपको किसी भी नियम को विस्तृत अथवा निलम्बित करने की शक्ति प्राप्त है।

***अध्यक्ष:** मैंने परसों एक बजे तक का जो समय दिया है उस से अधिक समय देने के लिये मैं तैयार नहीं हूं। उस समय तक मैं जिस नियम को विस्तृत करने की आवश्यकता देखूंगा उसे विस्तृत कर दूंगा।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): श्रीमान्, क्या आप अनुच्छेदों में टेढ़े अक्षरों में छपे हुए सशोधनों को उठाने जा रहे हैं? यदि आप का यह विचार है तो हमारे लिये निश्चित समय में कार्य समाप्त करना कठिन होगा। इसके अतिरिक्त कुछ स्थलों पर बिल्कुल नवीन परिवर्तन किये गये हैं और उन पर पहले कभी विचार नहीं किया गया है। कुछ ऐसे परिवर्तन किये गये हैं जिन पर सभा में कभी भी विचार नहीं किया गया है। सदस्य इस प्रकार के परिवर्तनों का विरोध करना चाहेंगे।

***अध्यक्ष:** सदस्य ऐसे प्रश्नों को मेरे निर्णय के लिये छोड़ सकते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): मुझे एक औचित्य प्रश्न करना है।

***पंडित लक्ष्मी कांत मैत्र** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय के वक्तव्य के सम्बन्ध में औचित्य प्रश्न कैसे उठाया जा सकता है?

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** अध्यक्ष महोदय के वक्तव्य के विरुद्ध मुझे कुछ नहीं कहना है।

***श्री आर. के. सिधवाः** जब सभा के समक्ष कोई प्रश्न ही नहीं है तो औचित्य प्रश्न कैसे उठाया जा सकता है?

***अध्यक्षः** मेरे विचार से माननीय सदस्य महोदय अन्य सदस्यों के समान कुछ बातें कहना चाहते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मैं कार्यवाही में बाधा नहीं डालना चाहता। श्रीमान्, आपने कृपा कर के कहा है कि सभा में इस सत्र में केवल वे संशोधन उपस्थित किये जायें जो मसौदा-समिति के किये हुए संशोधनों से सुसम्बद्ध हों। मेरा निवेदन है कि यह नियम न केवल हमारे संशोधनों को लागू किया जाये बल्कि मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तावित संशोधनों को भी लागू किया जाये। यदि हमारा कोई संशोधन मसौदा-समिति के किये हुए संशोधनों से असम्बद्ध हो तो उसे उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाये। मैं इस से सहमत हूं किन्तु साथ ही, मेरे विचार से, मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तावित उन संशोधनों को उपस्थित करने की भी आज्ञा नहीं दी जानी चाहिये जो कल रात हमें दिये गये थे। संशोधनों पर संशोधनों के सम्बन्ध में एक ही नियमों का अनुसरण करना चाहिये। हमारे नियमों में मसौदा-समिति द्वारा आगे उपस्थित किये जाने वाले संशोधनों में तथा सदस्यों द्वारा उपस्थित किये जाने वाले संशोधनों में विभेद नहीं किया गया है। इसलिये या तो उन सब को उपस्थित करने की आज्ञा देनी चाहिये या उन सब को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं देनी चाहिये। मैं आप से पूछता हूं कि क्या आप मसौदा-समिति द्वारा बाद में भेजे गये संशोधनों पर उसी आधार पर विचार करेंगे जिस आधार पर आप हमारे संशोधनों पर विचार करेंगे।

जहां तक दुहराये हुए मसौदे मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तुत संशोधनों का सम्बन्ध है, कई स्थलों पर परिवर्तनों को नहीं दिखाया गया है। कुछ स्थलों पर उन्हें टेढ़े अक्षरों में छापा गया है। कुछ स्थलों में महत्वपूर्ण परिवर्तनों को दिखाया ही नहीं गया है। इसलिये आपको तथा कार्यालय को यह पता लगाने में बहुत कठिनाई पड़ेगी कि जो संशोधन किये गये हैं उन से हमारे संशोधन सुसम्बद्ध हैं या नहीं। यह एक बहुत कठिन समस्या है। मैं निवेदन करता हूं कि इन सब बातों पर विचार किया जाये।

इस के अतिरिक्त मेरा एक सुझाव है और वह यह है कि जो संशोधन नियमों के अन्तर्गत नहीं आते उन पर मसौदाकार विचार करें। मैं चाहता हूं कि मसौदाकार उन पर विचार करें और यदि वे उन को मान्य हों तो, मेरा निवेदन है कि यद्यपि वे नियमों के अन्तर्गत न आ सकें परन्तु फिर भी उन्हें उपस्थित करने की आज्ञा दी जाये। मेरा निवेदन है कि उन से पाठ सुधर सकता है। उन्हें केवल प्रक्रिया-सम्बन्धी-कारणों के आधार पर अनियमित नहीं घोषित करना चाहिये। मैं आशा करता हूं कि कि मेरी इन बातों पर सावधानी से विचार किया जायेगा।

***अध्यक्ष:** मि. नजीरुद्दीन अहमद ने उन संशोधनों के सम्बन्ध में जो कुछ कहा है, जिन की सूचना मसौदा-समिति ने दी है और जो सूची 2 में छपे हुए हैं, मेरे विचार से, मुझे नियमों के अन्तर्गत स्वविवेक से निर्णय करने की जो शक्ति दी गई है वह इस प्रकार के मामलों के सम्बन्ध में ही है। मैं उन संशोधनों के सम्बन्ध में तथा अन्य संशोधनों के सम्बन्ध में भी स्वविवेक से निर्णय करूंगा। किन्तु मसौदा-समिति ने जिन संशोधनों की सूचना दी है उन का अवश्य ही कुछ महत्व है जो महत्व प्रत्येक सदस्य के प्रत्येक संशोधन का नहीं है। इसे दृष्टि में रखते हुए मैं उन संशोधनों पर विचार करूंगा और स्वविवेक से निर्णय करूंगा। यदि में यह देखूंगा कि किसी संशोधन की आवश्यकता नहीं है तो मैं उसे अनियमित घोषित कर दूंगा।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान, मेरे इस सुझाव के बारे में कि सभी रस्मी संशोधनों पर मसौदा-कार विचार करें और यदि वे उन्हें मान्य हों तो उन्हें उपस्थित करने की आज्ञा दी जाये, क्या तय किया गया है?

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि इस प्रकार के संशोधनों पर मसौदा-समिति विचार करती रही है और यदि उस ने अभी तक उन पर विचार नहीं किया है तो वह अब करेगी। इसी कारण मैं किसी संशोधन पर इस समय मत नहीं लेना चाहता और परसों मत लेना चाहता हूं। इस बीच मसौदा-समिति को उन संशोधनों पर विचार करने के लिये समय मिल जायेगा। यदि वह उन में से किसी संशोधन को स्वीकार करना चाहती है वह स्वीकार कर सकती है अथवा यदि मसौदा-समिति किन्हीं ऐसे संशोधनों को भी स्वीकार करना चाहती है जो पहली श्रेणी के न हों किन्तु संशोधनों पर संशोधन हों तो वह यह भी कर सकती हैं। मैं बुधवार को इन सभी संशोधनों को एक साथ उठाऊंगा। इस कारण मैं इस अवसर पर किसी भी संशोधन पर मत नहीं ले रहा हूं। इस से प्रत्येक व्यक्ति को संशोधनों पर विचार करने के लिए समय मिल जायेगा और प्रत्येक संशोधन पर पूर्ण विचार हो सकेगा।

जहां तक संशोधनों को उपस्थित करने के लिए समय देने का सम्बन्ध है मैं किसी संशोधन के लिए पांच मिनट से अधिक समय नहीं देना चाहूंगा। किन्तु, जैसा कि श्री महावीर त्यागी ने कहा है, यदि कोई संशोधन सारवान संशोधन हो और संविधान-सभा के पहले सत्र में किये हुए निर्णयों के परे हो तो सम्भवत: मैं बहस के लिये कुछ अधिक समय दूंगा। उन संशोधनों पर सम्भव है मैं कुछ लोगों को बोलने की आज्ञा भी दे दूं।

***माननीय श्री के. सन्तानम** (मद्रास: जनरल): सदस्यों के ऐसे संशोधनों पर भाषण नहीं देना चाहिये जो केवल रस्मी हों।

***अध्यक्ष:** मुझे आशा है कि सदस्य भाषण देने पर जोर नहीं देंगे क्योंकि, जैसा कि मैं कह चुका हूं, उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि हमें यह कार्य परसों एक बजे तक समाप्त कर देना है। यदि वे ऐसे संशोधनों पर भाषण देने के लिये आग्रह करेंगे जो न तो आनुषंगिक हों और न आवश्यक ही हों तो जो समय अधिक महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार-विमर्श करने में लगाया जा सकता है उसे वे नष्ट करेंगे।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव** (पूर्वी पंजाब: जनरल): श्रीमान्, कुछ विषयों के सम्बन्ध मसौदा-समिति के संशोधनों को देख कर प्रत्येक व्यक्ति हतोत्साह हो जाता है। इस सभा के विचारपूर्ण निर्णयों की उपेक्षा कर के संशोधन प्रस्तुत किये गये हैं और इस प्रकार मसौदा-समिति ने अपनी शक्तियों का अतिक्रमण किया है। सभा ने कुछ संशोधनों को अस्वीकृत कर दिया था किन्तु उन संशोधनों को फिर समाविष्ट कर दिया गया है। मेरा नम्र निवेदन है कि तृतीय पठन के अवसर पर मसौदा-समिति विषयों को इस प्रकार नहीं रख सकती कि सभा द्वारा स्वीकृत संशोधनों का खंडन हो जाये। मेरा नम्र निवेदन है कि जो संशोधन पहले अस्वीकार किये जा चुके हैं और जिन पर सभा में विचार-विमर्श हो चुका है उन्हें तृतीय पठन के अवसर पर फिर नहीं उठाना चाहिये।

मसौदा-समिति को केवल रस्मी और आनुषंगिक संशोधनों को तथा अत्यन्त आवश्यक संशोधनों को करने की आज्ञा दी गई थी। आवश्यक संशोधनों का यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि मसौदा-समिति सभा के विचारपूर्ण निर्णयों को दुहराये और इस लिये मेरा नम्र निवेदन है कि जहां तक इन संशोधनों का सम्बन्ध है इन्हें अनियमित घोषित कर देना चाहिये। जब संशोधन आयें तो उन के गुण-दोषों पर विचार कर के निर्णय किया जाये कि उन्हें प्रस्तुत करने की आज्ञा दी जाये या नहीं दी जाये।

***अध्यक्ष:** जैसा कि मैंने कहा है, मैं प्रत्येक संशोधन के गुण-दोषों पर विचार करूंगा। श्री ठाकुर दास भार्गव ने कोई बात ऐसी नहीं कही है जिस से इस विषय पर फिर विचार करने की आवश्यकता हो। उन्होंने जो कुछ कहा है उस का आशय वही है जिसे मैं व्यक्त कर चुका हूं।

***श्री एच. वी. कामत:** क्या बुधवार 1 बजे तक के लिये अन्तिम रूप से निर्णय कर लिया गया है?

***अध्यक्ष:** श्री हां, वह निर्णय अन्तिम निर्णय है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे मसौदा-समिति का प्रतिवेदन तथा समिति ने संविधान-सभा के नियमों के नियम 38-द के अधीन भारतीय संविधान के जिस मसौदे को दुहराया है उसे उपस्थित करना है श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''भारतीय संविधान के मसौदे के सम्बन्ध में मसौदा-समिति ने जिन संशोधनों की सिफारिश की है उन पर विचार किया जाये।''

श्रीमान्, इस सभा के पिछले सत्र में जो अनुच्छेद पारित किये गये थे उन्हें दुहराने अथवा उन में परिवर्तन करने के सम्बन्ध में मसौदा-समिति ने जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है अथवा सिफारिशें की हैं उन पर मैं बहुत लम्बा वक्तव्य नहीं देना चाहता। मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि सभा के समक्ष जो लम्बा शुद्धि-पत्र रखा गया है, अथवा सूची 2 में समाविष्ट संशोधनों की जो अनुपूरक सूची रखी गई है, उस के लिये मैं क्षमा-याचना नहीं करता। मेरे विचार से अच्छा तो यह

होता कि मसौदा समिति इस लम्बे शुद्धि-पत्र को तथा सूची 2 में समाविष्ट संशोधनों की अनुपूरक सूची को प्रस्तुत न करती किन्तु सभा को यह समझना चाहिये कि मसौदा समिति को बहुत कम समय में अत्यधिक कार्य करना पड़ा है। इस सभा के सभी सदस्यों को विदित है कि संविधान-सभा का पिछला सत्र 17 अक्तूबर को समाप्त हुआ था। आज 14 नवम्बर है। इस प्रकार संविधान के 395 अनुच्छेदों की परीक्षा करने के वृहत् कार्य को सम्पन्न करने के लिये मसौदा-समिति को पूरा एक महीना भी नहीं मिला। मैंने कहा तो यह है कि मसौदा-समिति को पूरा एक महीना भी नहीं मिला किन्तु यह भी सही वक्तव्य नहीं है क्योंकि नियम 38-द तथा अन्य नियमों के अधीन मसौदा-समिति को संविधान के दुहराये हुए मसौदे को सदस्यों को इस सभा के सत्र के आरम्भ होने से पांच दिन पूर्व देना था। वास्तव में संविधान की प्रतियां 6 नवम्बर को दे दी गईं थी, अर्थात् इस सत्र के आरम्भ होने से लगभग आठ दिन पूर्व दे दी गई थी। इसलिये मसौदा-समिति को आठ दिन और भी कम मिले। इस के अतिरिक्त इस पर भी विचार करना चाहिये कि संविधान के मसौदे को सदस्यों के पास समय पर भेजने के लिये उसे मसौदे को छापेखाने कुछ दिन पूर्व भेजना पड़ा ताकि उस की प्रतियां समय पर मिल सकें। मसौदे को छापेखाने 4 नवम्बर को भेजा गया। मसौदा-समिति के संशोधनों तथा परिवर्तनों को छापने के लिए छापेखाने को वास्तव में एक ही दिन मिला। न तो छापेखाने के लिये और न मसौदा-समिति के लिये और न प्रूफ देखने वाले के लिये यह सम्भव है कि वह एक ही दिन में 395 अनुच्छेदों के ग्रन्थ की सही प्रति प्रकाशित कर सके।

इस कारण से, जो कि एक पर्याप्त कारण है, मसौदा-समिति को एक लम्बा शुद्धि-पत्र निकालना पड़ा ताकि 5 तारीख को छापेखाने से उन्हें जो प्रति प्राप्त हुई थी उस में जो त्रुटियां रह गई थी, या जो अंश टूट गये थे उन की ओर ध्यान आकृष्ट हो सके। इन सब दिनों को निकाल कर यह ध्यान में आ जायेगा कि मसौदा-समिति को इस वृहत् कार्य को सम्पन्न करने के लिये केवल दस दिन मिले थे। चूंकि बहुत कम समय मिला था, अर्थात् केवल दस दिन मिले थे, इसलिये संशोधनों की दूसरी सूची निकालनी पड़ी। यदि मसौदा-समिति को इस विषय पर विचार करने के लिये अधिक समय मिला होता तो न तो शुद्धि-पत्र निकाला जाता और न संशोधनों की अनुपूरक सूची निकाली गई होती। मुझे आशा है कि मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तुत शुद्धि-पत्र तथा संशोधनों की द्वितीय सूची को पढ़ने में सभा को जो कष्ट होगा उस के लिये वह क्षमा प्रदान करेगी।

श्रीमान्, इस अवसर पर इस की आवश्यकता नहीं है कि मैं इस का विवरण दूं कि मसौदा-समिति ने संविधान के मसौदे में किस प्रकार के संशोधन तथा परिवर्तन किये हैं। प्रतिवेदन के पैरा 2 में बताया गया है कि किस प्रकार के परिवर्तन किये गये हैं। यह देखा जा सकता है कि मसौदा-समिति ने जो परिवर्तन किये हैं उन्हें तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। पहले वर्ग के जो

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

परिवर्तन हैं वे अनुच्छेदों, खंडों तथा उपखंडों की पुनर्गणना करने तथा विराम-चिन्हों को दुहराने के सम्बन्ध में हैं। यह बहुत कुछ इस कारण किया गया कि संविधान सभा के पिछले सत्र में जो अनुच्छेद पारित हुए वे यत्र तत्र बिखरे हुए थे और किसी एक विषय के शीर्षक के अधीन नहीं रखे गये थे। इसलिये पाठकों को तथा सभा के सदस्यों को किसी विषय से सम्बन्धित अनुच्छेदों का पूर्ण चित्र देने के लिये मसौदा-समिति ने कुछ अनुच्छेदों को एक भाग से निकाल कर दूसरे भाग में रखना तथा एक अध्याय से निकाल कर दूसरे अध्याय में रखना आवश्यक समझा ताकि उनके यथोचित समूह बन सकें और संविधान के विषय यथोचित रूप में रखें जा सकें। दूसरे वर्ग के जिन परिवर्तनों का प्रतिवेदन में वर्णन है वे केवल रस्मी और आनुषंगिक संशोधन हैं मसौदे के विभिन्न अनुच्छेदों में जहां कहीं ''इस संविधान के'' शब्द आये हैं उन्हें निकालने के सम्बन्ध में इसी प्रकार के संशोधन हैं। कहीं बड़े अक्षर न छाप कर छोटे अक्षर छाप दिये गये थे और उन्हें शुद्ध करना पड़ा है। अन्य भी कुछ परिवर्तन करने पड़े हैं जैसे कि शासक और राजप्रमुख का उल्लेख करना पड़ा है। इस प्रकार के परिवर्तन अन्त में किये गये थे जब कि हम परिभाषा-सम्बन्धी अनुच्छेदों पर विचार कर रहे थे। अन्य परिवर्तनों को संक्षेप में "आवश्यक संशोधन" कहा जा सकता है। ये आवश्यक परिवर्तन दो वर्गों में विभाजित किये जा सकते हैं। कुछ परिवर्तन तो ऐसे हैं जिन से अनुच्छेदों में कोई सारवान परिवर्तन नहीं होता। ये परिवर्तन भी आवश्यक हैं क्यांकि पिछले सत्र में कुछ अनुच्छेद जिस रूप में पारित किये गये उन की भाषा को देखते हुए यह अनुभव किया गया कि उन का आशय स्पष्ट नहीं होता अथवा उन में कुछ कमी रह जाती है। मसौदा-समिति ने इन अनुच्छेदों में बिना कोई सारवान परिवर्तन किये हुए इस कमी को दूर करने का प्रयास किया है। कुछ अन्य अनुच्छेदों में ऐसे आवश्यक परिवर्तन किये गये हैं जिन से उन में कुछ हद तक सारवान परिवर्तन होता है। यद्यपि ये परिवर्तन सारवान हैं किन्तु मसौदा-समिति ने यह विचार किया है कि इन परिवर्तनों को करना आवश्यक है क्योंकि यदि इन्हें नहीं किया जाता तो पिछले सत्र में ये अनुच्छेद जिस रूप में पारित किये गये थे उस रूप में उन में बहुत से दोष रह जाते तथा कई बातें छूट जाती। यह उचित नहीं समझा गया कि इन्हें इस रूप में रहने दिया जाये और इसलिये मसौदा-समिति ने उन परिवर्तनों को किया है जिन का सुझाव पैरा 2 के खंड (घ) में रखा गया है। मुझे आशा है कि ये परिवर्तन सभा को मान्य होंगे। कुछ सारवान परिवर्तनों की पैरा 4 में पर्याप्त व्याख्या की गई है। इस की आवश्यकता नहीं है कि इन परिवर्तनों के समर्थन में प्रतिवेदन में जो कुछ कहा गया है उसे मैं दुहराऊं।

श्रीमान्, मेरे विचार से मसौदा-समिति के प्रतिवेदन में जो कुछ कहा गया है उस से अधिक और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। मुझे आशा है कि मसौदा-समिति ने जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है तथा प्रतिवेदन में और सूची 2 में,

जिन की प्रतियां सदस्यों के पास भेज दी गई हैं, जिन परिवर्तनों की सिफारिश की है उन्हें सभा स्वीकार कर लेगी।

अनुच्छेदों के संशोधन

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर प्रतिवेदन को उपस्थित कर चुके हैं और अब सभा के समक्ष यह प्रस्ताव है कि मसौदा-समिति ने जिन संशोधनों की सिफारिश की है उन पर तथा संविधान के मसौदे पर विचार किया जाये.....

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान्, मेरे नाम से एक संशोधन है।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से वह केवल एक शाब्दिक संशोधन ही है।

***श्री एच.वी. कामत:** वह नियम 38-द के सम्बन्ध में है। मैं आधा ही मिनट लूंगा।

***अध्यक्ष:** मैं घड़ी को देखता रहूंगा। आप आधा ही मिनट लें।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान्, मैं सभा को† संशोधन पढ़ कर नहीं सुनाऊंगा। इस संशोधन को उपस्थित करते हुए मैं केवल मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने जो कुछ कहा है उस का अनुमोदन करना चाहता हूं और यह निवेदन करना चाहता हूं कि उसने ऐसे कार्य किया है जैसे कि उसे विशेष स्वातंत्र्य प्राप्त हो। इसलिए श्रीमान् मेरी आप से प्रार्थना है कि आप कृपा कर के हमारे उन संशोधनों के सम्बन्ध में उदारता से निर्णय करें जो मसौदा-समिति के संशोधनों से भिन्न हैं। मेरा केवल यही निवेदन है।

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में अपने संशोधन के बारे में आप ने कुछ नहीं कहा है। अच्छी बात है .....

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, क्या मैं जान सकता हूं कि क्या संशोधन में जो असंख्य शुद्धियां प्रकाशित की गई हैं वे भी सम्मिलित हैं और क्या वे भी संविधान के अंग समझी जायेंगी।

***अध्यक्ष:** शुद्धियां शुद्धियां ही हैं और वे उस में सम्मिलित हैं।

चूंकि श्री कामत ने अपना संशोधन उपस्थित किया है इसलिये मैं पहले उन के संशोधन पर मत लूंगा।

---

†प्रस्ताव में "the amendments recommended by the Drafting Committee in the Draft Constitution of India [भारतीय संविधान के मसौदे में मसौदा-समिति ने जिन संशोधनों की सिफारिश की है]" शब्दों के स्थान पर "the amendments to the Draft Constitution of India as recommended by the Drafting Committee under sub-rule (1) of Rule 38-R of the Constituent Assembly Rules [भारतीय संविधान के मसौदे में मसौदा-समिति ने संविधान-सभा के नियमों के नियम 38-द के उप-नियम (1) के अधीन जिन संशोधनों की सिफारिश की है]" शब्द रखे जायें।

***श्री एच.वी. कामतः** चूंकि वह बहुत कुछ मसौदे के शुद्धि के सम्बन्ध में है इसलिये मैं इस पर जोर नहीं देता कि उस पर मत लिया जाये।

***अध्यक्षः** अब मैं डॉ. अम्बेडकर के प्रस्ताव पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"भारतीय संविधान के मसौदे के सम्बन्ध में मसौदा-समिति ने जिन संशोधनों की सिफारिश की है उन पर विचार किया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** अब हम संशोधनों को उठायेंगे। प्रस्तावना। मसौदा-समिति ने प्रस्तावना के सम्बन्ध में कोई संशोधन उपस्थित नहीं किया है और जो संशोधन प्रस्तावना के सम्बन्ध में है उन्हें मैं नहीं उठाऊंगा। तब हम अनुच्छेद 1 उठायेंगे। एक संशोधन श्री नजीरुद्दीन अहमद और श्री कामत † के नाम से है। श्री कामत क्या आप उसे उपस्थित करना चाहते हैं और क्या उस सम्बन्ध में भाषण भी देना चाहते हैं?

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान् जहां तक विराम चिह्न विषयक संशोधनों का सम्बन्ध है, मैं चाहता हूं कि उन पर मसौदाकार ही विचार करें।

***अध्यक्षः** (श्री एच.वी. कामत से) आप का संशोधन भी विराम चिह्न ही के सम्बन्ध में है। आप को स्मरण रखना चाहिये कि आप अधिक महत्वपूर्ण संशोधनों को इस प्रकार कम समय देंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं जानना चाहता हूं कि क्या मसौदा-समिति उसे स्वीकार कर रही है।

***अध्यक्षः** कोई भी किसी संशोधन को स्वीकार या अस्वीकार नहीं कर रहा है।

***श्री एच. वी. कामतः** सभा ने मसौदे को जिस रूप में स्वीकार किया है, उस रूप में उस में ये शब्द हैं-"इंडिया, अर्थात्, भारत ....." सभा को जो दुहराया हुआ मसौदा दिया गया है उस में कहा गया है-"इंडिया, अर्थात् भारत....." मेरे विचार से जब अनुच्छेद 1 स्वीकार किया गया था तो सभा का उद्देश्य यह नहीं था। आशय यह था—इंडिया, अर्थात्, भारत'। इसी कारण दो कामा रखे गये और उन के बीच में पदावलि रखी गई। आशय,

---

† "अनुच्छेद 1 के खंड (1) में 'that is [अर्थात]' शब्द के पश्चात् एक कामा लगाया जाये और 'Bharat [भारत]' शब्द के पश्चात् जो कामा प्रयुक्त है वह निकाल दिया जाये।"

"इंडिया, अर्थात् भारत" नहीं है। अंग्रेजी के वाक्य का आशय इन विरामों के परिवर्तन से भिन्न हो जाता है। मेरे विचार से मूल-मसौदे में ये शब्द ठीक ढंग से रखे गये थे और मसौदा-समिति ने शब्दों में हेर-फेर कर के गलती की है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, मेरा यह सुझाव है कि मेरे जो रस्मी संशोधन हैं वे मसौदाकारों के सामने रखे जायें और यदि वे उन्हें स्वीकार करने के लिये तैयार हों तो मैं उन्हें उपस्थित करूंगा अन्यथा मैं उन्हें उपस्थित नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** उन्हें उन पर विचार करने दीजिये और यदि वे उन्हें स्वीकार करने के लिये तैयार होंगे तो वे उन के उपस्थित न किये जाने पर भी उन्हें स्वीकार कर लेंगे।

अब हम अनुच्छेद 5 उठायेंगे। मसौदा-समिति ने कोई संशोधन नहीं प्रस्तुत किया है इसलिये इन संशोधनों का प्रश्न ही नहीं उठता।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा: जनरल): मैं अपने संशोधन को (संशोधन संख्या 15) नहीं उपस्थित कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** उस का आशय अनुच्छेद 4 से पूरा हो जाता है। अनुच्छेद 13, श्री राज बहादुर, संशोधन संख्या 33 ।

***श्री राज बहादुर** (संयुक्त राज्य-मत्स्य): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 13 के खंड (3) के उपखंड (क) में,

(1) 'having [में]' शब्द के पश्चात् 'the force of law [विधि के समान प्रभावी]' शब्द रखें जायें।

(2) 'India [भारत]' शब्द के पश्चात् 'or any part thereof [अथवा उस का कोई भाग]' शब्द रखे जायें।

(3) 'the force of law [विधि के समान प्रभावी]' शब्द निकाल दिये जायें।

इस अनुच्छेद का आशय स्पष्ट करने के लिये ही मैं इस संशोधन को उपस्थित कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 14 उठायेंगे। मि. नजीरुद्दीन अहमद।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, मैं इस संशोधन को रस्मी तौर पर उपस्थित नहीं करना चाहता किन्तु केवल एक दो बातें मसौदाकारों के विचारार्थ कहना

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

चाहता हूं। अनुच्छेद 12 तथा अनुच्छेद 36 में ''राज्य'' शब्द की एक ही परिभाषा की गई है। इस कारण इन दो स्थलों में यह शब्द समानार्थक है। इसलिये हम यह कहते हैं कि ''राज्य को अमुक अधिकार है'' इत्यादि। यदि हम यह स्मरण रखें कि ''राज्य'' शब्द की अनुच्छेद 12 और 36 में जो परिभाषा की गई है उसमें केवल भारत सरकार ही सन्निहित नहीं है बल्कि प्रान्तों की सरकारें, देशी राज्यों की सरकारें, जिला बोर्ड, नगरपालिकाएं, स्थानीय बोर्ड तथा संघीय बोर्ड आदि भी सन्निहित हैं तो हम देखेंगे कि 'राज्य' शब्द के अन्तर्गत इस प्रकार की हजारों संस्थाएं आ जायेंगी। चूंकि हमने अनुच्छेद 37 से आरम्भ होने वाले तथा अनुच्छेद 50 में समाप्त होने वाले भाग 4 में प्रयुक्त इस शब्द की परिभाषा की है इसलिये हमने ''राज्य करेगा'' आदि पदावलियां प्रयोग की हैं।

यदि हम एक ही राज्य की चर्चा करते तो ''राज्य'' शब्द का प्रयोग उपयुक्त होता। चूंकि बहुत से राज्य होंगे और चूंकि हम ''यह राज्य'', ''वह राज्य'', ''कोई राज्य'', ''प्रत्येक राज्य'' आदि पदावलियों को प्रयोग करना चाहेंगे इसलिये हमें प्रसंगानुसार इन पदावलियों को प्रयोग करने की स्वतंत्रता प्रदान करने के लिये परिभाषा में जो ''दी'' शब्द रखा गया है वह निकाल दिया जाये। ''वह'', ''कोई'', ''प्रत्येक'' शब्द प्रसंगानुसार काम में लाये जा सकते हैं और उन्हें प्रयोग करने में परिभाषा से कोई बाधा नहीं होनी चाहिये। मैं अपने संशोधन को उपस्थित नहीं करना चाहता। जैसा कि मैं कह चुका हूं यह मसौदे की शुद्धि का प्रश्न है और इसे मसौदा-समिति के विचारार्थ छोड़ा जा सकता है। यदि वह इन संशोधनों को स्वीकार करने के लिये तैयार हो गई तो यह भी स्वीकार किया जा सकता है कि इन्हें उपस्थित कर दिया गया है।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 35 और 36 उपस्थित नहीं किये गये हैं। हम अब अनुच्छेद 18 को उठायेंगे।

मि. नजीरुद्दीन अहमद, आपने जो कुछ कहा है वह संशोधन संख्या 54 के सम्बन्ध में भी पर्याप्त है, क्यों?

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** जी हां।

(संशोधन संख्या 55 उपस्थित नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष** अब हम अनुच्छेद 22 को उठायेंगे। श्री शिब्बन लाल सक्सेना।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): श्रीमान, खण्ड (4) और खण्ड (7) के सम्बन्ध में मेरे कुछ संशोधन हैं।

मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 22 के खण्ड (4) में 'No law providing for preventive detention [निवारक निरोध उपबन्धित करने वाली कोई विधि]' शब्दों के स्थान पर 'Nothing in sub-clause (b) of clause (3) [खण्ड (3) के उपखण्ड (ख) की कोई बात]' शब्द, कोष्ठक, अक्षर तथा अंक रखे जायें और खण्ड (4) के उपखण्ड (ख) के अन्त में ये शब्द रखे जायें:—

'authorising such longer detention [जिन के द्वारा अधिक निरुद्ध रखने के लिये प्राधिकार दिया गया हो]' "

मेरा दूसरा संशोधन इस प्रकार है:

"अनुच्छेद 22 के खंड (7) में से 'for a poriod longer than three months [तीन महीने से अधिक कालावधि के लिये]' शब्द निकाल दिये जायें।"

मैं केवल यह चाहता हूं कि खंड (4) की पदावलि में सुधार किया जाये और खण्ड (7) में से ''तीन महीने से अधिक कालावधि के लिये" शब्द निकाल दिये जायें। संसद् को निरोध की अल्प कालावधि अथवा दीर्घ कालावधि निर्धारित करने के लिये विधि बनाने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** श्री सक्सेना, क्या संशोधन संख्या 82 एक पूर्व निर्णय का खंडन नहीं करता?

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** इस का अर्थ यह है कि संसद् तीन महीने से कम कालावधि अथवा तीन महीने से अधिक कालावधि विधि द्वारा निर्धारित कर सकती है। मैं नहीं चाहता कि कार्यपालिका इस शक्ति को प्रयोग करे।

***अध्यक्ष:** खण्ड (4) में इसे स्थान देकर उस का पाठ कैसा हो जायेगा?

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** वह इस प्रकार हो जायेगा–

"संसद विधि द्वारा विहित कर सकेगी कि किन परिस्थितियों के अधीन तथा किस प्रकार या प्रकारों के मामलों में किसी व्यक्ति को निवारक निरोध को उपबन्धित करने वाली किसी विधि के अधीन इत्यादि।"

मैं यह चाहता हूं कि संसद को लोगों को तीन महीने से कम कालावधि के लिये, अथवा तीन महीने से अधिक कालावधि के लिये, लोगों को निरुद्ध करने के सम्बन्ध में सरकार को प्राधिकार प्रदान करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिये। इस खंड के अधीन संसद को तीन महीने से कम कालावधि के लिये विधि बनाने की शक्ति प्राप्त नहीं होगी।

(संशोधन संख्या 83 और 84 उपस्थित नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** जब हम अनुच्छेद 31 उठायेंगे।

(संशोधन संख्या 115 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, अपने संशोधन संख्या 116 के सम्बन्ध में सभा का, मसौदा-समिति का तथा विशेष रूप से मसौदाकारों का ध्यान 'भारत सरकार' पदावलि के प्रयोग की ओर आकृष्ट करता हूं। वास्तव में यह पदावलि "भारत डोमीनियन'' पदावलि से विभेद करने के लिये प्रयोग की गई है। मेरा निवेदन है कि "भारत-डोमीनियन'' पदावलि केवल उस कालावधि के सम्बन्ध में है जो 15 अगस्त 1947 से आरम्भ होती है और 25 जनवरी 1950 को समाप्त होती है। उस के पूर्व हम "भारत सरकार'' पदावलि प्रयोग करते थे। जब तक डोमीनियन की हैसियत प्राप्त नहीं हुई तब तक के लिये सरकार को ''भारत सरकार'' कहना चाहिये। जब से हमारा देश डोमीनियन नहीं रहा तब से सरकार को ''संघ सरकार'' अथवा ''संघ की सरकार'' कहना चाहिये। यह हम जो कुछ निर्धारित कर आये हैं उस के अनुरूप होगा। अनुच्छेद 300 के खण्ड (1) में तथा अन्यत्र हम ने ''भारत संघ'' शब्द प्रयोग किये हैं। कुछ अनुच्छेदों में हम ने ''संघ के कार्य'' पदावलि भी प्रयोग की है। अन्यत्र भी हम ने ''संघ'' शब्द रखा है। इस प्रकार भारत सरकार को हम ने संघ कहा है। इस लिये मेरा निवेदन है कि हम ''भारत सरकार'' पदावलि को नहीं प्रयोग करें क्योंकि उस से डोमीनियन के पूर्व की सरकार का बोध होता है और किसी स्पष्ट पदावलि को प्रयोग करें। यह पदावलि ''संघ सरकार'' अथवा "भारतीय संघ की सरकार'' ही हो सकती है। हम अनुच्छेद 1 में कह आये हैं कि भारत राज्यों का संघ होगा। इस लिये हम जिस नई व्यवस्था को स्थापित करने जा रहे हैं उस में ''भारत सरकार'' पदावलि के स्थान पर ''संघ सरकार'', अथवा "भारतीय संघ की सरकार'' अथवा अन्य किसी पदावलि का प्रयोग करें। मैंने कुछ संशोधनों का सुझाव रखा है। मैं यह चाहता हूं कि इस पर मसौदा-समिति ही विचार करे।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 117—श्री सिधवा।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैं समझता हूं, कि मसौदा समिति ने जिस ''अन्यथा'' शब्द का सुझाव रखा है उस से मेरे संशोधन का आशय पूरा हो जाता है। इस लिये मैं अपने संशोधन को नहीं उपस्थित करना चाहता।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधन संख्या 118 उठाता हूं, जो मि. नजीरुद्दीन अहमद के नाम से है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान, संशोधन संख्या 118 के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि वह केवल मसौदे की शुद्धि के सम्बन्ध में है और मैं उसे मसौदाकारों के विचारार्थ अलग रख रहा हूं।

***अध्यक्ष:** अब हमारे सामने अनुच्छेद 34 आता है। वह एक नवीन अनुच्छेद है। इस के सम्बन्ध में बहुत से संशोधन आये हैं। श्री दास। यह संशोधन अनुच्छेद निकाल देने के सम्बन्ध में है।

***श्री बी. दास:** श्रीमान, मैं उसे उपस्थित नहीं कर रहा हूं।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान, उसे मैं उपस्थित करना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** क्या आप इस अनुच्छेद को निकालने के सम्बन्ध में प्रस्ताव उपस्थित करना चाहते हैं?

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** जी हां, श्रीमान। यह अनुच्छेद 34 एक नवीन अनुच्छेद है। इस में कहा गया है कि जब सेना-विधि प्रवृत कर दी जायेगी उस समय संसद को पदाधिकारियों को तारण देने की शक्ति प्राप्त होगी। मेरे विचार से यह नवीन अनुच्छेद अनियमित घोषित कर देना चाहिये। इसे सभा ने पहले कभी पारित नहीं किया था। इस के अतिरिक्त इस अनुच्छेद को रखने से वे पदाधिकारी, जो सेना-विधि वाले क्षेत्र में काम करेंगे ज्यादती करने के लिये प्रोत्साहित होंगे क्योंकि वे समझेंगे कि संसद-निर्मित अधिनियम से उन का तारण हो जायेगा। इस कारण मेरा निवेदन है कि इस अनुच्छेद को रखना उचित नहीं है। जब कभी सेना-विधि प्रवर्तन में लाई जाये वह तत्सम्बन्धी विधि के अन्तर्गत ही प्रवर्तन में लाई जाये। वह तत्सम्बन्धी विधि का अतिक्रमण करके प्रवर्तन में न लाई जाये। इस लिये, मेरे विचार से इस अनुच्छेद की आवश्यकता नहीं है और इसे संविधान से निकाल देना चाहिये। जैसा कि मैं कह चुका हूं। यह अनियमित भी है। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 34 निकाल दिया जाये।"

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान, क्या मैं इस संशोधन पर बोल सकता हूं?

***अध्यक्ष:** सभी संशोधनों के उपस्थित किये जाने के पश्चात् ही सदस्य बोल सकेंगे।

संशोधन संख्या 122, श्री कामत।

***श्री एच.वी. कामत:** क्या मैं तीनों संशोधनों को एक साथ उपस्थित कर सकता हूं?

***अध्यक्ष:** जी हां।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन संख्या 122, 123 और 124 को उपस्थित करता हूं।

"अनुच्छेद 34 से 'or any other person [अथवा किसी अन्य व्यक्ति को]' शब्द निकाल दिये जायें।''

"अनुच्छेद 34 में 'order [व्यवस्था]' शब्द के स्थान पर 'public-order [लोक-व्यवस्था]' शब्द रखे जायें।"

[श्री एच.वी. कामत]

अन्तिम संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 124, इस प्रकार है:

''अनुच्छेद 34 में 'done under martial law [सेना-विधि के अधीन]' शब्दों के स्थान पर 'done by such person under martial law [जो उस व्यक्ति ने सेना विधि के अधीन]' शब्द रखे जायें।''

श्रीमान, मैं आरम्भ में ही यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि जैसा कि श्री शिब्बन लाल सक्सेना भी चाहते हैं, मैं इस का स्वागत करूंगा कि संविधान में कहीं भी सेना-विधि का उल्लेख न हो। देश में लोक-व्यवस्था तथा सुख शान्ति बनाये रखने के लिये संविधान में पर्याप्त उपबन्ध हैं। हम संविधान के अध्याय 1 को स्वीकार कर चुके हैं, जिस में आपात सम्बन्धी उपबन्ध भी हैं। यदि हम यह मान लेते हैं कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है जब सेना-विधि की घोषणा करना आवश्यक हो जायेगा तो इस का कुछ परिणाम भी अवश्य ही होगा। सेना-विधि को प्रवृत्त करने में कई कार्य किये जाते हैं। हम सभी जानते हैं कि सेना-विधि किस प्रकार प्रवृत्त की जाती है। अधिकारी कई ऐसे कार्य करते हैं जो वास्तव में संविधान के अधीन निमित विधि के अनुसार अवैध होते हैं और इस लिये बाद में उन का तारण करने की आवश्यकता होती है ताकि उन्हें उन कार्यों के लिये कोई दंड न दिया जा सके। इसी को दृष्टि में रख कर मैने सभा के समक्ष ये संशोधन उपस्थित किये हैं।

मसौदा-समिति ने अनुच्छेद 34 को जिस रूप में रखा है उस में संघ अथवा किसी राज्य की सेवा में किसी व्यक्ति को अथवा किसी अन्य व्यक्ति को तारण देने का प्रयास किया गया है। मैं यह नहीं चाहता कि हम इतना आगे बढ़ें कि किसी भी व्यक्ति को तारण दे दें। संघ अथवा किसी राज्य की सेवा में जो व्यक्ति है उन के सम्बन्ध में हम अपवाद कर सकते हैं। किन्तु जिस परिवर्तन का प्रस्ताव रखा गया है उस के अधीन इस आशय के एक उपबन्ध को सभी को लागू किया जा रहा है। इस प्रकार के किसी उपबन्ध का बहुत विस्तृत प्रभाव होगा और इसे संविधान में स्थान नहीं देना चाहिये। इस उद्देश्य से मैंने एक संशोधन उपस्थित किया है जिस का आशय यह है कि ''अथवा किसी अन्य व्यक्ति को'' शब्द निकाल दिये जायें। यदि हमें तारण देना ही है तो हम केवल उन व्यक्तियों को तारण दें जो संघ की अथवा अन्य किसी राज्य की सेवा में हों और केवल उस काल के लिये तारण दें जब कि उन के क्षेत्र में सेना विधि प्रवर्तन में रही हो।

मेरे अन्य दो संशोधन बहुत कुछ रस्मी संशोधन हैं। पहले संशोधन द्वारा अनुच्छेद की पदावलि 34 को अनुच्छेद 33 की पदावलि के अनुरूप बनाने का प्रयास किया गया है। इस अनुच्छेद में ''लोक व्यवस्था'' शब्द प्रयुक्त हैं। मैंने यह सुझाव रखा है कि यह अनुच्छेद भी अनुच्छेद 33 के अनुरूप हो और इस में जो ''व्यवस्था'' शब्द प्रयुक्त है उस के स्थान पर 'लोक-व्यवस्था'' शब्द रखे जायें।

अनुच्छेद 34 के प्रथम भाग की शब्दावलि को देख कर ही अन्तिम संशोधन उपस्थित किया गया है। जब हम संघ की अथवा किसी राज्य की सेवा में किसी व्यक्ति के

कार्यों की चर्चा करते हैं तो अनुच्छेद के अन्तिम भाग में भी इसे स्पष्ट करने की आवश्यकता होती है और हम कहते हैं उस व्यक्ति के कार्य। इस लिये मेरे विचार से ''उस'' शब्द रखा जाना चाहिये ताकि अनुच्छेद के पहले भाग में उल्लिखित लोक-सेवकों के कार्यों के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों के कार्य नहीं समझे जायें।

श्रीमान्, मैं संशोधन संख्या 122, 123 और 124 उपस्थित करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि उन पर सावधानी से विचार किया जाये।

***अध्यक्ष:** चूंकि यह एक बिल्कुल ही नवीन अनुच्छेद है इस लिये प्रश्न यह उठता है कि मैं उसे संशोधन के रूप में उपस्थित करने की आज्ञा दूं या न दूं। मेरे विचार से सभी लिखित और अलिखित संविधानों में, यद्यपि मैं यह निश्चित रूप से नहीं कह सकता परन्तु मेरा यह विचार है कि सभी संविधानों में सेना-विधि के प्रवृत होने के पश्चात् इस प्रकार के तारण सम्बन्धी अधिनियम बनाने के बारे में उपबन्ध होते हैं। यदि हम अपने संविधान में सेना-विधि के प्रवर्तन-काल में किये हुए कार्यों के लिये तारण देने के सम्बन्ध में उपबन्ध नहीं रखेंगे तो कठिनाई उठ खड़ी होगी। इस लिये मैं मसौदा-समिति के इस संशोधन को नियमित घोषित करता हूं।

जो अन्य संशोधन उपस्थित किये गये हैं उन के सम्बन्ध में अब बहस की जा सकती है। यदि सदस्य चाहें तो वे अब इस अनुच्छेद पर तथा उपस्थित किये गये संशोधनों पर बोल सकते हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, मैं इस नवीन अनुच्छेद का समर्थन करने के लिये उठा हूं। जो बातें कही गई हैं और जो तर्क उपस्थित किये गये हैं उन्हें मैं नहीं दुहराऊंगा क्योंकि श्रीमान्, आप इस अनुच्छेद को नियमित घोषित कर चुके हैं। मसौदा-समिति को आवश्यक संशोधनों का सुझाव रखने की शक्ति दी गई थी। इस लिये मेरे विचार से उस ने अपने क्षेत्राधिकार का अतिक्रमण नहीं किया है। मेरे विचार से जब देश में क्रान्ति की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी तो सरकार को सेना-विधि प्रवृत्त करने के लिये बाध्य होना पड़ेगा असाधारण स्थितियों में देश की साधारण विधि का आश्रय नहीं लिया जा सकता। क्रान्ति की स्थिति उत्पन्न होने पर ही सेना-विधि प्रवृत्त की जाती है। क्रान्ति की स्थिति का निराकरण क्रान्ति के उपायों से ही हो सकता है। सभी अधिकारियों के मुक्त हो जाने का खतरा कोई विशेष खतरा या गम्भीर खतरा नहीं है। मैं यह इस लिये कह रहा हूं कि संसद को ऐसे मामलों का पुनर्विलोकन करने की शक्ति प्राप्त है। यदि किसी अधिकारी ने अपने क्षेत्राधिकार का उल्लंघन किया हो, अथवा सेना-विधि की आवश्यकताओं के लिये जितनी कठोरता की आवश्यकता थी उस से अधिक कठोरता की हो, तो संसद् इस प्रकार के अधिकारियों को तारण नहीं देगी। जिन अधिकारियों ने मनमाने ढंग से कार्य किया हो उन के आचरण का पुन:विलोकन करने का संसद् को पूर्ण अधिकार है। सेना-विधि के प्रवर्तन में आने पर देश में जो स्थिति उत्पन्न हो गई हो उस का निराकरण मनमाने ढंग से ही किया जा

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

सकता है। मैं इस उपबन्ध का समर्थन करता हूं और वह केवल इस कारण नहीं कि संसार के अन्य संविधानों में भी इस प्रकार के उपबन्ध हैं बल्कि इस कारण भी कि यह एक आवश्यक तथा न्यायोचित उपबन्ध है। अपने देश के राजनैतिक जीवन को ध्यान में रखते हुए मैं इस अनुच्छेद का हृदय से समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** क्या इस सम्बन्ध में और भी कोई सदस्य बोलना चाहते हैं?

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** जी नहीं।

***अध्यक्ष:** अब हम आगे का अनुच्छेद उठायेंगे। मेरे विचार से इस सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर अन्त में उत्तर देंगे।

हम अनुच्छेद 35 तथा श्री कामत के संशोधन को उठाते हैं। किन्तु मेरे विचार से वह एक शाब्दिक संशोधन ही है?

***श्री एच.वी. कामत:** जी हां, श्रीमान। मैं चाहता हूं कि उस पर मसौदा-समिति ही स्वविवेक से निर्णय करे।

***अध्यक्ष:** तब हमें अब अनुच्छेद 47 उठाना होगा। इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में श्री कामत तथा मि. नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन संख्या 140 है।

***श्री एच.वी. कामत:** जहां तक मेरा सम्बन्ध है मैं चाहता हूं कि उस पर मसौदा-समिति ही विचार करे।

***अध्यक्ष:** वह उपस्थित नहीं किया जा रहा है।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "अनुच्छेद 48 में 'improving the breeds of milch and draught cattle including cows and calves and for prohibiting their slaughter [दुधारू और वाहक ढोरों की, जिन में गाय और बछड़े भी सम्मिलित हैं, नस्ल को सुधारने तथा उन के वध का प्रतिषेध करने के लिये]' शब्दों के स्थान पर 'preserving and improving the breeds of cattle and prohibit the slaughter of cows and other useful cattle especially milch and draught cattle and their young stock [ढोरों की नस्ल के परिरक्षण और सुधारने के लिये अग्रसर होगा और गायों के अन्य उपयोगी ढोरों के, विशेषत: दुधारू और वाहक ढोरों के तथा उन के बछड़ों के वध का प्रतिषेध करेगा]' शब्द रखे जायें।"

इस स्थल पर भी यह देखा जा सकता है कि इस सभा ने मूल अनुच्छेद जिस रूप में स्वीकार किया था उस में सारवान परिवर्तन किया गया है श्रीमान, मूल अनुच्छेद इस प्रकार था:

''राज्य कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से संघटित करने का प्रयास करेगा तथा ढोरों की नस्ल के परिरक्षण और सुधारने के लिये अग्रसर होगा और गायों तथा अन्य उपयोगी ढोरों के वध का, विशेषत: दुधारू और वाहक ढोरों तथा उन के बछड़ों के वध का, प्रतिषेध करेगा।"

इस प्रकार मूल अनुच्छेद में कहा गया है कि "राज्य गायों के वध का प्रतिषेध करेगा।" वर्तमान अनुच्छेद में इसे अशक्त शब्दों में कहा गया गया है। वह इस प्रकार है:

"राज्य कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से संघटित करने का प्रयास करेगा तथा दुधारू और वाहक ढोरों की, जिन में गाय और बछड़े भी सम्मिलित हैं, नस्ल को सुधारने तथा उन के वध का प्रतिषेध करने के लिये अग्रसर होगा।"

इस प्रकार इस में यह नहीं कहा गया है कि "राज्य गायों के वध का प्रतिषेध करेगा।" इस में कहा गया है कि ''वह दुधारू और वाहक ढोरों की, जिन में गाय भी सम्मिलित हैं, नस्ल को सुधारने तथा उन के वध का प्रतिषेध करने के लिये अग्रसर होगा।'' मूल अनुच्छेद में कहा गया है कि वह गायों तथा अन्य उपयोगी ढोरों के वध का, विशेषत: दुधारू और वाहक ढोरों के वध का प्रतिषेध करेगा। यह एक सारवान परिवर्तन है और मेरे विचार से मसौदा-समिति को एक ऐसे विषय के सम्बन्ध में इस प्रकार का परिवर्तन करने का प्राधिकार नहीं दिया गया था जो एक आधारभूत विषय है और जिस के विषय में बहुत उत्तेजना-पूर्ण बहस हो चुकी है। एक लम्बी बहस के पश्चात् यह निर्णय किया गया था। मेरे विचार से किसी व्यक्ति को इस प्रकार का परिवर्तन करने और मूल शब्दों के स्थान पर अन्य शब्द रखने का अधिकार नहीं है। मैं अपील करता हूं कि मूल शब्द ही रखे जायें। यह परिवर्तन अनियमित है क्योंकि मसौदा-समिति को ऐसा कोई परिवर्तन करने का अधिकार नहीं दिया गया था जैसा कि उस ने इस अनुच्छेद में किया है।

***अध्यक्ष:** पंडित भार्गव, क्या आप के संशोधन का आशय बहुत कुछ प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना के संशोधन से पूरा नहीं हो जाता?

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** उस का आशय अंशत: पूरा होता है किन्तु कुछ अन्य बातें भी हैं। चूंकि मेरा संशोधन संख्या 142 ठीक उसी प्रकार नहीं है जैसा कि प्रोफेसर सक्सेना का संशोधन है इस लिये इसे उपस्थित करने के लिये मैं आप की अनुमति चाहता हूं। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 48 में 'milch and draught cattle including cows and calves and for prohibiting their slaughter [दुधारू और वाहक ढोरों की, जिन

[पंडित ठाकुर दास भार्गव]

में गाय और बछड़े भी सम्मिलित हैं, नस्ल को सुधारने तथा उन के वध का प्रतिषेध करने के लिये अग्रसर होगा], शब्दों के स्थान पर cattle and prohibit the slaughter of cows and other useful cattle specially milch and draught cattle and their young stock [ढोरों की नस्ल सुधारने के लिये अग्रसर होगा और गायों के और अन्य उपयोगी ढोरों के, विशेषत: दुधारू और वाहक ढोरों के तथा उन के बछड़ों के वध का प्रतिषेध करेगा]' शब्द रखे जायें।"

यदि आप की अनुमति हो तो मैं यह भी उपस्थित करना चाहता हूं कि:

"अनुच्छेद 48 में 'for prohibiting their slaughter [उन के वध का प्रतिषेध करने के लिये अग्रसर होगा]' शब्दों के स्थान पर 'prohibit the slaughter of such cattle [ऐसे ढोरों के वध का प्रतिषेध करेगा]' शब्द रखे जायें।' "

अथवा, विकल्पत:

"अनुच्छेद 48 में 'and for prohibiting their slaughter [और उन के वध का प्रतिषेध करने के लिये अग्रसर होगा]' शब्दों के स्थान पर 'and prohibit their slaughter [और उन के वध का प्रतिषेध करेगा] शब्द रखे जायें।"

इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में मैं सभा को पहले यह स्मरण कराना चाहता हूं कि इस अनुच्छेद पर सभा में काफी उत्तेजनापूर्ण बहस हो चुकी है। इस अनुच्छेद को सारी सभा ने तथा इस सभा के सब से बड़े दल ने मंजूर किया है। इस के अतिरिक्त श्रीमान, मैं बिना किसी के विशेषाधिकार में हस्तक्षेप किये हुए यह निवेदन करना चाहता हूं कि इस अनुच्छेद का मसौदा-समिति के सभापति महोदय ने भी अनुमोदन किया था। मूल अनुच्छेद की शब्दावलि बिल्कुल भिन्न थी। हम ने बहुत-समझ बूझ कर मसौदा तैयार करने का कार्य ऐसे लोगों को सौंपा था जो कार्य निपुण थे ताकि उस पर कोई व्यक्ति आपत्ति न कर सके। मूल मसौदा बहुत सशक्त था किन्तु उसे अन्त में यह रूप दिया गया। जब इस सम्बन्ध में सभा में बहस हुई थी तो यह पूर्ण रूप से बता दिया गया था कि ये शब्द किन कारणों से रखे जा रहे हैं। मेरा निवेदन है कि इस प्रकार के विषय के सम्बन्ध में, जब कि किसी अनुच्छेद का समर्थन और विरोध होने के पश्चात वह पारित कर दिया गया हो, कोई कारण नहीं है कि मसौदा समिति उस की शब्दावलि में हेरफेर करे। इसके अतिरिक्त, सभा को स्मरण होगा कि इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में कई अन्य संशोधन भी उपस्थित किये गये थे। सेठ गोविन्द दास ने धार्मिक दृष्टि से एक संशोधन उपस्थित किया था किन्तु वह स्वीकार नहीं किया गया। मेरा निवेदन है कि मेरे लिये इस अनुच्छेद का प्रत्येक शब्द पवित्र है और वह इस अर्थ में कि

उसे सारी सभा ने स्वीकार किया है। मैं यह भी निवेदन करना चाहता हूं कि इस अनुच्छेद के आधार पर कुछ प्रान्तीय सरकारें कार्यवाही कर चुकी हैं। उन्होंने गो-वध का प्रतिषेध किया है। इसलिये जब इस अनुच्छेद को कुछ प्रान्त बहुत कुछ कार्यान्वित भी कर चुके हैं, यह उचित नहीं है कि इसकी शब्दावलि में हेरफेर किया जाये।

उस अनुच्छेद के सम्बन्ध में, जो अब संशोधित रूप में हमारे सामने रखा गया है, मेरा निवेदन है कि उस पर विचार किया जाये। अब वह अनुच्छेद इस रूप में है:

> ''राज्य कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से संघटित करने का प्रयास करेगा तथा दुधारू और वाहक ढोरों की, जिन में गाय और बछड़े भी सम्मिलित हैं, नस्ल को सुधारने.....''

मूल अनुच्छेद में ''ढोरों की नस्ल के परिरक्षण और सुधारने के लिये.....'' शब्द प्रयुक्त थे। मेरा निवेदन है कि ''ढोरों की नस्ल सुधारने'' शब्दों का आशय ''ढोरों की नस्ल के परिरक्षण और सुधारने'' शब्दों के आशय से भिन्न है। यह कहा जा सकता है कि जब तक किसी नस्ल का परिरक्षण नहीं किया जाये तब तक वह सुधारी नहीं जा सकती है किन्तु यह कथन, मेरे विचार से गलत है।

हो सकता है कि सुधारने के लिये किसी नस्ल को नष्ट करना पड़े। कुछ लोग यह तर्क भी उपस्थित कर सकते हैं कि ढोरों की एक नस्ल नष्ट कर दी जाये ताकि अन्य नस्लों में सुधार हो सके। यह बहुत सूक्ष्म और महत्वपूर्ण विषय है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** आखिर 'प्रतिषेध'' का आशय क्या है? उस का अर्थ परिरक्षण ही है।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** जब दुर्भिक्ष पड़ता है तो सरकार का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह कुछ नस्लों का परिरक्षण करे भले ही वह उन्हें सुधार न सके। इस प्रकार इन शब्दों का एक विशेष अर्थ है। इन में हेर-फेर नहीं करना चाहिये।

अब मैं उस विषय को उठाता हूं जिसकी ओर श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने मेरा ध्यान आकृष्ट किया है। वे यह कहते हैं कि ''प्रतिषेध'' शब्द प्रयुक्त है और उस में परिरक्षण सन्निहित है। यदि वे इस अनुच्छेद को पढ़ें तो वे देखेंगे कि इस प्रतिषेध शब्द को भी कुछ हेर-फेर के साथ रखा गया है। अब ये शब्द रखे गये हैं।

''दुधारू और वाहक ढोरों की, जिन में गाय और बछड़े भी सम्मिलित हैं, नस्ल को सुधारने तथा उन के वध का प्रतिषेध करने के लिये अग्रसर होगा।'' यदि ये ''उन के'' शब्द गायों और बछड़ों के सम्बन्ध में हैं तो सांडों, बैलों, और भैंसों का क्या होगा? यदि वे दुधारू और वाहक ढोरों के सम्बन्ध में है तो इस प्रश्न

[पंडित ठाकुर दास भार्गव]

पर विचार करना होगा कि दुधारू ढोर किन्हें कहते हैं। इसके अतिरिक्त ''दुग्धहीन'' ढोर दुधारू ढोरों के अन्तर्गत नहीं आते। इस के अतिरिक्त वाहक ढोर कौन कहे जायेंगे? इस सम्बन्ध में अवश्य ही कठिनाई उठ खड़ी होगी। मेरा नम्र निवेदन है कि यदि अनुच्छेद 38-क को यथोचित रूप से पढ़ा जायेगा तो उस का यही अर्थ लगाया जायेगा कि कम से कम गायों और बछड़ों के वध का पूर्ण प्रतिषेध है। जो शब्द प्रयुक्त हैं वे ये हैं कि ''और गायों के वध का प्रतिषेध करेगा''। उपयोगिता का प्रश्न वाहक ढोरों के सम्बन्ध में उठता है। उपयोगी ढोरों का वध नहीं किया जाना चाहिये। अब प्रश्न यह है कि उपयोगी ढोर किन्हें कहा जायेगा संशोधन में ''उपयोगी'' शब्द नहीं प्रयुक्त है। सभा को स्मरण होगा कि सरकार ने एक समिति नियुक्त की थी और उस समिति के प्रतिवेदन को सरकार ने स्वीकार किया था। इस समय सरकार उपयोगी ढोरों के परिरक्षण के लिये तथा उन के वध का प्रतिषेध करने के लिये वचनबद्ध है। इस प्रकार के ढोरों के सम्बन्ध में कुछ विधेयक विधान-सभा के विचाराधीन हैं।

यदि आप शब्दावलियों की तुलना करें तो आप देखेंगे कि मूल-अनुच्छेद में ये शब्द प्रयुक्त हैं:

> ".....ढोरों की नस्ल के परिरक्षण और सुधारने के लिये अग्रसर होगा और गायों तथा अन्य उपयोगी ढोरों के वध का, विशेषत: दुधारू और वाहक ढोरों तथा उन के बछड़ों के वध का प्रतिषेध करेगा।''

ये शब्द निकाल दिये जायेंगे और इनके स्थान पर ये शब्द रखे जायेंगे:—

> ".....उनके वध का प्रतिषेध करने के लिये अग्रसर होगा।" मेरा नम्र निवेदन है कि यद्यपि इन दो शब्दावलियों में अधिक अन्तर नहीं है किन्तु ''करेगा'' शब्द से जो जोर पड़ता था उस के कारण संविधान में यह निर्देशक सिद्धान्त एक अनिवार्य सिद्धान्त का रूप धारण कर लेता था किन्तु अब वह बात नहीं रह गई है। मेरा निवेदन है कि यह अनुच्छेद पहले जिस रूप में था उस में हेर-फेर नहीं किया जाये और इसे उसी रूप में रहने दिया जाय। डॉ. अम्बेडकर ने इस अनुच्छेद को पहले जिस रूप में रखा था वह इस का ठीक रूप था। अब यदि वे शब्दावलि में हेर-फेर करेंगे तो मेरा निवेदन है कि उस से अर्थ भी बदल जायेगा। इस दृष्टि से मैं सभा से प्रार्थना करता हूं कि इस अनुच्छेद में परिवर्तन नहीं किया जाये। यह एक बहुत नाजुक मामला है। जिस अनुच्छेद को अन्य सदस्य धार्मिक दृष्टि से रखना चाहते थे उस के स्थान पर हम ने इस अनुच्छेद को रखा है। यह अब एक उपयोगी धारा के रूप में ही रह गया है किन्तु फिर भी इस में करोड़ों लोगों की भावनाएं अन्तर्ग्रस्त हैं।

मैं संशोधन संख्या 144 के सम्बन्ध में दो शब्द और कहूंगा। "और उनके वध" शब्दों के कई अर्थ लगाये जा सकते हैं। यह कहा जा सकता है कि वे गायों

और बछड़ों के सम्बन्ध में प्रयुक्त है और यह भी कहा जा सकता है कि वे दुधारू और वाहक ढोरों के सम्बन्ध में प्रयुक्त है। चाहे इन शब्दों का इन में से कोई अर्थ क्यों न हो, अथवा दोनों अर्थ क्यों न हों, ये दोनों अर्थ आपत्तिजनक हैं। मेरा आप से निवेदन है कि आप मूल अनुच्छेद 38-क के इस से कहीं अधिक विस्तृत आशय पर विचार करें जिस में ये दो अर्थ भी निहित हैं। इस में कोई सन्देह नहीं कि उस से जनसाधारण की आशा पूरी नहीं होती किन्तु उस अनुच्छेद को सभा ने एक समझौते के पश्चात् रखा था। इस समझौते में हस्तक्षेप न किया जाये।

***अध्यक्ष:** मि. नजीरुद्दीन।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं अपना संशोधन नहीं उपस्थित कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** क्या कोई सज्जन इस अनुच्छेद पर, अथवा संशोधनों पर बोलना चाहते हैं?

तब हम अनुच्छेद 53 को उठायेंगे। संशोधन संख्या 151, श्री कामत।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन संख्या 151 और 152 को उपस्थित करता हूं। संशोधन संख्या 151 इस प्रकार है।

"अनुच्छेद 53 के खंड (1) में 'this Constitution [इस संविधान]' शब्दों के स्थान पर 'the Constitution [संविधान]' शब्द रखा जाये।"

संशोधन संख्या 152 इस प्रकार है:

''अनुच्छेद 53 के खंड (1) में 'Constitution [संविधान]' शब्द के पश्चात् 'and the law [और विधि] शब्द रखे जायें।"

यदि सभा मेरे संशोधनों को स्वीकार कर लेगी तो अनुच्छेद 53 का खंड (1) इस प्रकार हो जायेगा:-

"संघ की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित होगी तथा वह इस का प्रयोग संविधान और विधि के अनुसार या तो स्वयं या अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों के द्वारा करेगा।"

सभा के पिछले सत्र में हमने इस अनुच्छेद को इसी रूप में स्वीकार किया था। मेरी समझ में नहीं आता कि मसौदा-समिति इस अनुच्छेद के इस खंड में आखिर इन परिवर्तनों को क्यों करना चाहती है। मसौदा-समिति ने जिन परिवर्तनों का सुझाव रखा है उन में कोई सार नहीं है। आइये, हम इस खंड की सावधानी से परीक्षा करें। यदि इस खंड में केवल संघ के राष्ट्रपति का उल्लेख होता तो सम्भवत: इस देश की विधि का उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि राष्ट्रपति संविधान के अनुसार ही कार्य करेगा और हम ने एक अनुच्छेद इस आशय का भी रखा है कि संविधान का अतिक्रमण करने के लिये राष्ट्रपति पर महाभियोग लगाया जायेगा। पिछले सत्र में पूर्वोक्त शब्दों को विशेष रूप से रखा गया था। मसौदा-समिति ने प्रस्तुत किया था तथा सभा ने स्वीकार किया था। वे शब्द कौन से थे?

[श्री एच.वी. कामत]

"...राष्ट्रपति..... या तो स्वयं या अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों द्वारा करेगा।''

हम ने इन शब्दों का विरोध किया था और कहा था कि ये शब्द बिल्कुल अनावश्यक हैं किन्तु मसौदा-समिति के इस सम्बन्ध में अपने विचार थे और उस ने अपना मत स्वीकार करवा दिया और इन शब्दों को प्रविष्ट किया यद्यपि मेरी अब भी यही धारणा है कि ये अनावश्यक हैं। किन्तु यह पदावलि, अर्थात् ''अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों द्वारा,'' सभा ने स्वीकार की है और यदि इसे रहने दिया जाता है तो कम से कम मेरी यह धारणा है कि विधि का भी स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये। इस अनुच्छेद के खंड (2) को देखने से भी सभा को ज्ञात हो जायेगा। कि उस में यह उल्लिखित है कि रक्षा-बलों का सर्वोच्च समादेश राष्ट्रपति में निहित होगा और उस का प्रयोग विधि से विनियमित होगा। संविधान में कई विषयों के सम्बन्ध में हम ने कहा है कि उन के बारे में संसद् को विधि-निर्माण की शक्ति प्राप्त है। हमारे संविधान में सभी प्रश्नों को हल नहीं किया गया है। कई बातें संसद के लिये छोड़ दी गई हैं और यह कहा गया है कि उन का विनियमन विधि द्वारा होगा।

इस लिये जब अधीनस्थ पदाधिकारियों द्वारा शक्ति प्रयोग का उल्लेख होता है तो इसका उल्लेख भी आवश्यक है कि उस का विनियमन संविधान तथा विधि द्वारा होगा।

पहला संशोधन एक शाब्दिक संशोधन ही है क्योंकि मेरी यह धारणा है कि जब कभी संविधान का उल्लेख हो तो हर बार ''इस संविधान'' पदावलि के प्रयोग की आवश्यकता नहीं है। ''संविधान'' से भारत का संविधान ही अभिप्रेत है। मैं कह नहीं सकता कि मसौदा-समिति ने इस खंड में इस प्रकार की गलती कैसे की है। मैं सिफारिश करता हूं कि सभा संशोधन संख्या 151 और 152 पर सावधानी से विचार करे।

(संशोधन संख्या 153 उपस्थित नहीं किया गया।)

***अध्यक्षः** क्या कोई सज्जन श्री कामत द्वारा उपस्थित किये गये संशोधनों के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहते हैं?

तब हम अगले अनुच्छेद को, अर्थात् अनुच्छेद 57 को उठायेंगे।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या† 156, श्री कामत।

***श्री एच.वी. कामतः** वह केवल एक रस्मी संशोधन है और मैं चाहता हूं कि उस पर मसौदा-समिति ही विचार करे।

---

†अनुच्छेद 57 से 'subject to the other provisions of the Constitution [इस संविधान के अन्य उपबन्धों के अधीन रहते हुए]' शब्द निकाल दिये जायें।

***अध्यक्षः** अच्छी बात है। तब हम अनुच्छेद 69 उठाते हैं। संशोधन संख्या 188 और 189, श्री कामत।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान, मैं संशोधन संख्या 188 और 189 को उपस्थित करता हूं। संशोधन संख्या 188 इस प्रकार है—

"अनुच्छेद 69 में शपथ और प्रतिज्ञान के प्रपत्र में से 'as by law established [विधि द्वारा स्थापित]' शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन संख्या 189 इस प्रकार है:

"अनुच्छेद 69 में शपथ और प्रतिज्ञान के प्रपत्र में 'the duty upon which I am about to enter [जिस कर्त्तव्य को मैं करने जा रहा हूं उस का]' शब्दों के स्थान पर 'the duties of the office upon which I am about to enter जिस पद को मैं ग्रहण करने वाला हूं उस के कर्त्तव्यों का]' शब्द रखे जायें।"

यदि मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तुत अनुच्छेद को देखा जाये तो मैं समझता हूं कि यह स्पष्ट हो जायेगा कि मैंने जिन परिवर्तनों का सुझाव रखा है वे आवश्यक हैं। पहले संशोधन के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि मसौदा-समिति ने जिस शपथ का सुझाव रखा है उस में ''विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान'' का उल्लेख है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि संविधान विधि द्वारा स्थापित किया गया है। वास्तव में विधि संविधान के अधीन बनती है और संविधान विधि के अधीन नहीं बनता। हम संविधान को स्वीकार करते हैं और जो कोई विधियां बनाई जाती हैं वे बाद में संविधान के अधीन बनाई जाती हैं। यह सभा एक सर्वोच्च सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न सभा है और वह जिस संविधान को बनायेगी उस के सम्बन्ध में यह कहने की आवश्यकता नहीं होगी कि वह विधि द्वारा स्थापित किया गया है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** क्या मैं माननीय सदस्य को यह सूचित कर सकता हूं कि तृतीय अनुसूची में यह पदावलि प्रयुक्त है?

***श्री एच.वी. कामतः** क्या मैं श्री सन्तानम को सूचित कर सकता हूं कि राष्ट्रपति की शपथ के सम्बन्ध में जो अनुच्छेद है उस में ''विधि द्वारा स्थापित संविधान'' पदावलि प्रयुक्त नहीं है?

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** वह इस से बिल्कुल भिन्न है।

***श्री एच.वी. कामतः** मेरे विचार से यह बिल्कुल इस के समान ही है। श्री सन्तानम् का मत भिन्न हो सकता है किन्तु यदि वे अनुच्छेद 60 में राष्ट्रपति के लिये जो शपथ रखी गई है उसे देखें तो उन्हें ज्ञात हो जायेगा कि उस में ''विधि द्वारा स्थापित संविधान'' शब्द प्रयुक्त नहीं है। संविधान विधि द्वारा स्थापित नहीं किया जाता है।

[श्री एच.वी. कामत]

संविधान का अपना स्वतंत्र अस्तित्व होता है। यदि श्री सन्तानम इस सूक्ष्म बात को नहीं समझ पा रहे हैं तो मुझे खेद है। अनुच्छद 60 में राष्ट्रपति के लिये जो शपथ रखी गई है वह इस प्रकार है:

"मैं... श्रद्धापूर्वक भारत के राष्ट्रपति-पद का कार्यपालन करूंगा तथा अपनी पूरी योग्यता से संविधान और विधि का परिरक्षण, संरक्षण और प्रतिरक्षण करूंगा...."

यह दूसरी बात है कि ''और विधि'' शब्द प्रयोग किये गये हैं किन्तु संविधान विधि द्वारा नहीं स्थापित किया जाता। मैं यही निवेदन करना चाहता हूं।

मुझे आशा है कि मसौदा-समिति संशोधन संख्या 188 पर विचार करेगी और उसे स्वीकार कर लेगी। ''विधि द्वारा स्थापित संविधान'' में और ''सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न सभा द्वारा निर्मित संविधान'' में अन्तर है। यह कहना अनावश्यक है कि वह विधि द्वारा स्थापित किया गया है।

अपने दूसरे संशोधन के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि मसौदा-समिति ने गलत अंग्रेजी प्रयोग की है। 'समिति में विधि के, संविधान के और भाषा के कई विशेषज्ञ हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि उस समिति ने अंग्रेजी भाषा की ऐसी गलती क्यों की है। मैं सभा का ध्यान इस ओर दिलाता हूं कि कोई व्यक्ति पद के कर्तव्य का नहीं बल्कि कर्तव्यों का निर्वहन करता है। ''पद के कर्तव्यों'' पदावलि प्रयोग करनी चाहिये। यदि अनुच्छेद 71 के खंड (2) को देखा जाये तो यह विदित हो जायेगा कि उस में ठीक अंग्रेजी प्रयुक्त है। उस में जो पदावलि प्रयुक्त है उस का आशय इस प्रकार है-''राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पद के कर्तव्यों''। मैं पहले के एक अनुच्छेद अर्थात् अनुच्छेद 68 के खंड (2) के अन्तिम भाग की ओर भी निर्देश करता हूं जिस में कहा गया है– ''अपने पद ग्रहण की तारीख से''। सभी समझदार लोग यही कहेंगे कि उस अनुच्छेद की अंग्रेजी सही है। यदि सभा मेरे संशोधन को स्वीकार कर लेगी तो शपथ अथवा प्रतिज्ञान का यह रूप हो जायेगा:

''मैं, अमुक, ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि मैं संविधान के प्रति श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा तथा जिस पद को मैं ग्रहण करने वाला हूं उसके कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक निर्वहन करूंगा।''

मैं इन संशोधनों को उपस्थित करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि इन्हें स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्ष:** जैसा कि सन्तानम् ने कहा है, अनुसूची 3 में भी यही पदावलि प्रयुक्त है।

***श्री एच.वी. कामतः** उस में भी आनुषंगिक परिवर्तन करना होगा।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 71 के खंड (2) में 'the date of the decision [विनिश्चय की तारीख]' शब्दों के स्थान पर 'the time of the decision [विनिश्चय का समय]' शब्द रखे जायें।"

श्रीमान, यह संशोधन राष्ट्रपति का निर्वाचन उच्चतम-न्यायालय द्वारा शून्य घोषित किये जाने पर उसकी पदावलि की समाप्ति के सम्बन्ध में है। प्रश्न यह है कि क्या पदावलि विनिश्चय की तारीख से समाप्त होती है अथवा विनिश्चय के समय से समाप्त होती है। यदि विनिश्चय बारह बजे किया जाता है तो तर्कयुक्त यही है कि राष्ट्रपति बारह बजे तक कार्य करता रहे और उस समय के पश्चात् राष्ट्रपति न रहे। यदि हम शब्दावलि को इसी रूप में रहने दें तो इसका अर्थ यह होगा कि यदि विनिश्चय बारह बजे किया गया तो राष्ट्रपति पहले दिन की अर्धरात्री से कृत्यकारी नहीं रहेगा। इसका यह प्रभाव होगा कि राष्ट्रपति ने अर्धरात्री से बारह बजे तक जो भी कार्य किये होंगे उन का शून्यन हो जायेगा।

***माननीय श्री के सन्तानमः** इस आशय का एक संशोधन (अर्थात संशोधन संख्या 448) है

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** कठिनाई यह है कि इन में अधिकांश संशोधन सदस्यों के संशोधनों से लिये गये हैं। मैं केवल यह चाहता हूं कि यह त्रुटि दूर कर दी जाये परन्तु अपनी जगह पर यह बात भी है कि सदस्यों के बहुत से संशोधनों को अपनाया गया है और उन्हें मसौदा-समिति के संशोधन कहा गया है। इस से समिति के सदस्यों को जो प्रतिष्ठा प्राप्त होगी उस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है क्योंकि वे यह पहली बार नहीं कह रहे हैं। मैंने द्वितीय पठन के अवसर पर भी यह कहा था। वे सीधे सीधे हमारे संशोधनों को स्वीकार नहीं करते हैं किन्तु उन्हें अपने बना कर उपस्थित करते हैं।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से अपने संशोधनों के लिये अन्य सदस्यों को जो श्रेय प्राप्त हो सकता है उस पर मसौदा-समिति को कोई आपत्ति नहीं है।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 66 का खण्ड (3) निकाल दिया जाये।''

यह भी एक नया उपबन्ध है और इस से मंत्रियों के उत्तरदायित्व में हस्तक्षेप होता है। इस लिये इसे नहीं रहने देना चाहिये। यह अनावश्यक है अथवा यह भी कहा जा सकता है कि इसमें दुष्टता छिपी हुई है। इसे न रखना चाहिये।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 77 के खंड (3) में 'President [राष्ट्रपति] शब्द के स्थान पर 'Prime-Minister [प्रधानमंत्री] शब्द रखे जायें"।

श्रीमान यह अनुच्छेद सरकारी कार्य के संचालन ने सम्बन्ध में है। सरकारी कार्य का वास्तव में अर्थ है मंत्रालयों के कृत्य। मंत्रालयों का प्रधान प्रधान-मंत्री होगा। मुझे विदित है कि सभी आदेश राष्ट्रपति के नाम से निकाले जायेंगे किन्तु इस अनुच्छेद का राष्ट्रपति से कोई सम्बन्ध नहीं है। किसी मंत्रालय के अन्दरूनी मामलों के सम्बन्ध में प्रधान-मंत्री मंत्रालय से परामर्श करता है और स्वयं उत्तरदायी होता है। इसलिये ''राष्ट्रपति'' शब्द के स्थान पर ''प्रधान-मंत्री'' शब्द रखे जाने चाहियें।

मुझे इस सम्बन्ध में कोई आपत्ति नहीं है कि विधि के अधीन सभी आदेश राष्ट्रपति के नाम से निकाले जाते हैं। यह एक भिन्न बात है क्योंकि इसका मंत्रालय के अन्दरूनी मामलों से सम्बद्ध नियमों से ही सम्बन्ध नहीं है और इस लिये इस सम्बन्ध में संसद हस्तक्षेप नहीं कर सकती है। इस में कोई सन्देह नहीं कि संसद आलोचना कर सकती है। किन्तु यह अन्दरूनी मामलों के सम्बन्ध में है जिन के लिये सम्बन्धित मंत्री उतरदाई होगा और इस लिये मंत्रालय से परामर्श कर के प्रधान-मंत्री को न कि राष्ट्रपति को नियम बनाने चाहियें। उन नियमों पर प्रधान-मंत्री के हस्ताक्षर होने चाहियें।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन संख्या 203 तथा 204 उपस्थित करता हूं।

"अनुच्छेद 77 के खंड (3) में 'shall [बनायेगा]' के स्थान पर 'may [बना सकता है]' शब्द रखे जायें।''

''अनुच्छेद 66 के खंड (3) में 'more convenient [अधिक सुविधापूर्वक]' शब्द के स्थान पर 'efficient and convenient [योग्यता से तथा सुविधापूर्वक]' शब्द रखे जायें:

अथवा, विकल्पत:

"अनुच्छेद 77 के खंड 3 में से 'more (अधिक)' शब्द निकाल दिया जाये।"

मैं अपने मित्र प्रोफेसर सक्सेना के इस विचार से सहमत नहीं हूं कि इस प्रकार के उपबन्ध की आवश्यकता नहीं है। मंत्रिमंडल के कार्य के संचालन के लिये कुछ नियमों का होना आवश्यक है। इन नियमों को बनायेगा कौन? प्रश्न यह है कि क्या इन्हें-संसद बनायेगी अथवा राष्ट्रपति। कार्य-संचालन के नियमों को राष्ट्रपति को बनाना चाहिये। और उसे, जैसा कि संविधान में निर्धारित है, मंत्रियों से परामर्श

करके कार्य करना चाहिये। इसलिये प्रोफेसर सक्सेना के संशोधन में कोई बल नहीं है क्योंकि जहां कहीं "राष्ट्रपति" शब्द प्रयुक्त है उस का अर्थ यही है कि राष्ट्रपति मंत्री-परिषद् से परामर्श कर के कार्य करेगा।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** किन्तु संविधान में इस आशय के कोई शब्द नहीं हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** पिछले सत्र में मैंने यह प्रश्न उठाया था और डॉ. अम्बेडकर तथा श्री अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर ने हमें यह आश्वासन दिया था कि स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार का उपबन्ध न रख के भी इस का उद्देश्य पूरा हो जायेगा।

जहां तक मेरे उस संशोधन का सम्बन्ध है जो "बनायेगा" शब्द के स्थान पर "बना सकता है" शब्द रखने के सम्बन्ध में है, मेरा यह निवेदन है कि इस स्थल पर "बनायेगा" शब्द बहुत कुछ अनुपयुक्त है। अन्य कई अनुच्छेदों में हम ने ''कर सकता है'' शब्द प्रयोग किये हैं और यहां भी हम उन्हीं शब्दों को रख सकते हैं। इन शब्दों में वही बल है जो ''करेगा'' शब्द में है। ''बना सकता है'' शब्द इस स्थल पर अधिक उपयुक्त होंगे और उन से इस अनुच्छेद का आशय अधिक स्पष्ट हो जायेगा।

मेरे दूसरे संशोधन, अर्थात संशोधन संख्या 204 का उद्देश्य यह है कि ''अधिक सुविधापूर्वक'' शब्दों के स्थान पर ''योग्यता से तथा सुविधापूर्वक'' शब्द रखे जायें। मुझे विश्वास है कि यह खंड भारत शासन अधिनियम से ज्यों का त्यों ले लिया गया है क्योंकि प्राय: सभी अवसरों पर, सौभाग्य से अथवा दुर्भाग्य से मसौदा-समिति के बुद्धिमान सदस्यों का पथप्रदर्शन उसी से हुआ है। वे हम से कहते आये हैं कि भारत शासन-अधिनियम में इस प्रकार की भाषा प्रयुक्त है और हम से पूछते रहे हैं कि क्या आप सर सैमुअल होर तथा उन के सहकारियों की भाषा पर आपति करने का साहस कर सकते हैं क्योंकि आखिर हम भारतीय उन की भाषा पर आपत्ति करने वाले होते कौन हैं? किन्तु अब संसार में इसे सभी स्वीकार करते हैं कि भारतीय अंग्रेजों से अच्छे भाषा-विद हैं। यह कहा जाता है कि इंगलिस्तान के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति ने एक बार कहा था कि संसार में केवल दो ही व्यक्ति दोष-शून्य अंग्रेजी बोलते है और वे दोनों ही भारतीय हैं। यह कुछ वर्ष पूर्व कहा गया था।

***श्री आर.के. सिधवा:** वे कौन हैं?

***श्री एच.वी. कामत:** चूंकि श्री सिधवा उन के नाम जानने के इच्छुक हैं इसलिये मैं बताना चाहता हूं कि यह स्वर्गीय श्री निवास शास्त्री तथा सरोजनी नायडू के बारे में कहा गया था। जबकि भारतीय दोष-शून्य अंग्रेजी बोलते तो हम भारत-शासन-अधिनियम की अंग्रेजी के सम्बन्ध में शपथ लेकर यह क्यों कहें कि वह शत-प्रतिशत सही है? समझदारी की बात यही है कि उस की अंग्रेजी में जो दोष हों उन्हें दूर कर दिया जाये और साथ ही ''अधिक सुविधापूर्वक'' शब्दों के स्थान पर ''योग्यता से तथा सुविधापूर्वक'' शब्द रखे जायें। यह सभी स्वीकार करते

[श्री एच.वी. कामत]

हैं कि कुछ समय से योग्यता गिर गई है। इस लिये हमें यह संकल्प करना चाहिये कि हम कार्य-संचालन केवल सुविधा-पूर्वक ही नहीं करेंगे बल्कि योग्यता से भी करेंगे। इन शब्दों के साथ मैं इन दो संशोधनों को उपस्थित करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि इन्हें स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्ष:** अब हम संशोधन संख्या 90 उठायेंगे। संशोधन संख्या 215 ।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं संशोधन संख्या 214 उपस्थित करना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** वह प्रश्न वास्तव में उठता ही नहीं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं संशोधन संख्या 214 उपस्थित नहीं कर रहा हूं। मैं केवल एक दोष की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूं। मैं यह बताना चाहता हूं कि अंग्रेजी के शब्द ''दी'' का कई स्थलों पर ठीक प्रयोग नहीं किया गया है। कई स्थलों पर ''डिप्टी चेयरमैन'', ''चेयरमैन'' अथवा ''स्पीकर'' के पहले हम ने ''दी'' शब्द प्रयोग किया है और कई स्थलों पर उसे प्रयोग नहीं किया है। एकरूपता लाने के उद्देश्य से मैंने संशोधन उपस्थित किये हैं। उन पर विचार किया जाये। मैं संशोधन संख्या 215 नहीं उपस्थित कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 96 को उठायेंगे।

***श्री एच.वी कामत:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 96 के खंड (2) में 'and shall, notwithstanding anything in article 100, be entitled to vote only in the first instance on such resolution or on any other matter during such proceedings but not in the case of equality of votes [तथा अनुच्छेद 100 में किसी बात के होते हुए भी ऐसे संकल्प पर, अथवा ऐसी कार्यवाहियों में किसी अन्य विषय पर, प्रथमत: ही मत देने का हक होगा किन्तु मत-साम्य होने की दशा में न होगा]' शब्दों के स्थान पर 'but, notwithstanding anything in article 100, shall not be entitled to vote at all on such resolution or any other matter during such proceedings [किन्तु अनुच्छेद 100 में किसी बात के होते हुए भी ऐसे संकल्प पर, अथवा ऐसी कार्यवाहियों में किसी अन्य विषय पर मत देने का कोई हक नहीं होगा]' शब्द रखे जायें।"

अब मैं अपने अगले संशोधन को उपस्थित करता हूं। वह इस प्रकार है:

"अनुच्छेद 96 के खंड (2) में 'anything in article 100 '[अनुच्छेद 100 में किसी बात के होते हुए भी]' शब्दों के स्थान पर anything contained in article 100 [अनुच्छेद 100 में किसी बात के रहते हुए भी]' शब्द रखे जायें।"

मेरा दूसरा संशोधन केवल शाब्दिक संशोधन ही है और मैं चाहता हूं कि मसौदा-समिति उसे, जैसे भी चाहे वैसे, निबटाये। किन्तु पहला संशोधन (संशोधन संख्या 227) एक आनुषंगिक तथा सारवान संशोधन है। मसौदा-समिति ने जिस खंड (2) को प्रस्तुत किया है वह एक नवीन खंड है। लोक-सभा के अध्यक्ष को पद से हटाने की प्रक्रिया तथा राज्य परिषद् के सभापति को पद से हटाने की प्रक्रिया में विभेद किया गया है। मसौदा-समिति के सभापति ने आज सभा को नहीं बताया कि यह विभेद क्यों किया गया है।

यदि सभा के माननीय सदस्य अनुच्छेद 292(2) को देखेंगे तो उन्हें ज्ञात हो जायेगा कि राज्य-परिषद के सभापति को पद से हटाने के लिये जो संकल्प प्रस्तुत किया जायेगा उस पर मत देने का उसे हक नहीं होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** क्या मैं यह बता सकता हूं कि सभापति उत्तर सदन का सदस्य नहीं होगा? वह उप-राष्ट्रपति होगा।

***श्री एच.वी. कामतः** संघ का उप-राष्ट्रपति सभापति होगा। तर्क की दृष्टि से भी मेरी समझ में नहीं आता कि जब आलोचना अथवा अविश्वास का प्रस्ताव अथवा उसे पद से हटाने के लिय कोई अन्य प्रस्ताव उपस्थित किया जायेगा, तो उसे आखिर मत देने का हक क्यों हो।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): उस के मत देने का हक नहीं छीना जा रहा है।

***श्री एच.वी. कामतः** श्री कृष्णमाचारी वाद-विवाद का उत्तर बाद में दे सकते हैं। वे बिना किसी कारण विध्न न डालें।

जब सभा में अध्यक्ष को हटाने के उद्देश्य से कोई प्रस्ताव उपस्थित किया गया हो तो अध्यक्ष सभा में विद्यमान रह सकता है और कार्यवाही में भाग ले सकता है तथा अपनी प्रतिरक्षा कर सकता है। किन्तु औचित्य तथा न्याय की दृष्टि से उसे मत नहीं देना चाहिये। वह अपनी प्रतिरक्षा कर सकता है किन्तु उसे मत देने का अधिकार प्रदान करना बहुत ही अनुचित होगा। मसौदा-समिति को इस सम्बन्ध में अधिक जानकारी हो सकती है किन्तु अपनी जानकारी के आधार पर मैं कह सकता हूं कि जिस अध्यक्ष को पद से हटाना हो उसे मत देने का अधिकार नहीं प्रदान करना चाहिये। हो सकता है कि दो पक्षों में बहुत कम अन्तर हो और एक ओर 55 तथा दूसरी ओर 56 मत पड़े हों। इस दशा में अध्यक्ष अपने ही मत से पदासीन रह सकता है किन्तु इस सभा का यह उद्देश्य नहीं है। इसलिये श्रीमान, मेरा निवेदन है कि अध्यक्ष को पद से हटाने के लिये जो कार्यवाही हो उस में मत देने के अधिकार से उसे वंचित रखना चाहिये। मैं अपना संशोधन उपस्थित

[श्री एच.वी. कामत]

करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि उस पर गम्भीरता से विचार किया जाये।

(संशोधन संख्या 229 उपस्थित नहीं किया गया)

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, यह अनुच्छेद संसद के अध्यक्ष के आचरण के सम्बन्ध में बहस करने के बारे में हैं। इसलिये नवीन खंड (2) एक उपयुक्त खंड है। साधारणत: सभा की कार्यवाही में भाग लेने अथवा बोलने का अधिकार अध्यक्ष को प्राप्त नहीं होता है । किन्तु जब उस के आचरण पर बहस हो रही हो तो यह उचित है कि उसे सफाई देने के लिये अवसर प्रदान किया जाये। इसलिये खंड (2) एक उपयुक्त खंड है। श्रीमान, मैं केवल उस में थोड़ा परिवर्तन करना चाहता हूं। मैं यह प्रथा चाहता हूं कि अध्यक्ष अन्य मामलों में न तो बोले और न सभा की कार्यवाही में भाग ले। इस खण्ड में कहा गया है-"जब अध्यक्ष को अपने पद से हटाने का कोई संकल्प लोक-सभा में विचाराधीन हो तब उस को लोक-सभा में बोलने तथा दूसरे प्रकार से उस की कार्यवाहियों में भाग लेने का अधिकार होगा, इत्यादि।'' मैं यह चाहता हूं कि ''तब'' के स्थान पर ''केवल तब'' शब्द रखे जायें। मैं उस शब्द पर अधिक जोर देना चाहता हूं। यह एक उपयुक्त प्रथा है कि जब अध्यक्ष के अपने आचरण पर बहस हो रही हो उस समय के अतिरिक्त अन्य किसी समय उसे सभा की कार्यवाहियों में भाग नहीं लेना चाहिये।

***अध्यक्ष:** इस खंड की शब्दावलि का यही अर्थ है।

***श्री आर.के. सिधवा:** यदि यह बात है तो ठीक है। मत देने के प्रश्न के सम्बन्ध में श्री कामत ने कहा था कि अध्यक्ष को मत देने का अधिकार नहीं होना चाहिये। मेरे विचार से उसे मत देने का अधिकार होना चाहिये। आखिर है तो वह सभा का सदस्य ही। पहली बार उसे मत देने का अधिकार होना चाहिये किन्तु जब दूसरी बार मत लिया जाये तो वह मत न दे। उसे एक मत देने का अधिकार होना चाहिये।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 100 को उठायेंगे। संशोधन संख्या 231 ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मसौदा-समिति के द्वितीय सूची के संशोधन संख्या 452 को दृष्टि में रखते हुए माननीय सदस्य कृपा कर के विचार करें कि क्या उन के संशोधन के उपस्थित किये जाने की आवश्यकता है।

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 100 के बारे में जहां तक उन संशोधनों का सम्बन्ध है, जिन की सूचना श्री कामत ने दी है, श्री कृष्णमाचारी बता चुके हैं कि उस अनुच्छेद के सम्बन्ध में कुछ संशोधन मसौदा-समिति भी उपस्थित करना चाहती है। वे द्वितीय सूची के संशोधन संख्या 452 में निविष्ट हैं सम्भवत: उस

संशोधन को देखने के पश्चात आप अपने संशोधनों को उपस्थित करना आवश्यक समझें।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अनुच्छेद के निराकरण विषय संशोधन के अतिरिक्त अधिकांश संशोधनों का आशय उस से पूरा हो जाता है।

***अध्यक्ष:** श्री कामत, यदि आप अपने संशोधन को उपस्थित करना चाहते हैं तो आप को इस की पूरी स्वतंत्रता है। केवल यह कहा गया है कि सम्भव है कि आप उन्हें उपस्थित करने की आवश्यकता का अनुभव न करें। अच्छी बात है, आप उन्हें उपस्थित करें। मेरे विचार से यदि आप उन्हें उपस्थित कर देंगे तो कुछ समय बच जायेगा।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान मैं इस सूची के संशोधन संख्या 231, 234, 235 और 238 को उपस्थित करता हूं।

"अनुच्छेद 100 के खण्ड (1) में 'other than the Speaker [अध्यक्ष को छोड़ कर] शब्दों के स्थान पर 'other than the Chairman or Speaker [सभापति अथवा अध्यक्ष को छोड़ कर]' शब्द रखे जायें।"

"अनुच्छेद 100 के खण्ड (1) के दूसरे पैरा में 'acting as such [इस के रूप में कार्य करने वाला]' शब्दों के स्थान पर 'acting as Chairman or Speaker [सभापति अथवा अध्यक्ष के रूप में कार्य करने वाला]' शब्द रखे जायें।''

''अनुच्छेद 100 के खंड (1) के दूसरे पैरा में 'in the case of [इन दी केस आफ]' शब्दों के स्थान पर 'in case of [इन केस आफ]' शब्द रखे जायें।"

"अनुच्छेद 100 के खंड (3) में 'Until Parliament by law otherwise provides, the quorum shall be one tenth of the total number of members of the House [जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित न करे तब तक... गणपूर्ति सदन के सदस्यों की सम्पूर्ण संख्या का दशांश होगी]' शब्दों के स्थान पर उस खंड के दूसरे पैरा के रूप में यह रखा जाए:-

'Until Parliament by law otherwise provides, the quorum shall be one-tenth of the total number of members of the House.

[जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित न करे तब तक गणपूर्ति सदन के सदस्यों की सम्पूर्ण संख्या का दशांश होगी।]"

संशोधन संख्या 235 केवल 'दी' विशेषण के सम्बन्ध में एक शाब्दिक संशोधन है। मैं चाहता हूं कि यथोचित अवसर पर मसौदा-समिति ही उस पर विचार करे। 231 से लेकर 234 तक जो संशोधन हैं उन का एक ही समूह है। वे एक समान हैं। यदि सभा उस अनुच्छेद को देखे जिसका मसौदा द्वितीय

[श्री एच.वी. कामत]

पठन के अवसर पर निश्चित किया गया था और उस की तुलना वर्तमान मसौदे से करे तो उसे ज्ञात हो जायेगा कि क्या अन्तर है। मैं कह नहीं सकता कि उस में छापे की गलती रह गई है अथवा जान बूझ कर परिवर्तन किया गया है। अनुच्छेद 100 का खंड (1) सभा में उपस्थित कर दिया गया है। उस के अन्तिम भाग में ये शब्द प्रयुक्त हैं- ''अध्यक्ष या सभापति अथवा अध्यक्ष के रूप में कार्य करने वाले व्यक्ति को छोड़ कर"।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** वह सभा का सदस्य नहीं होगा इसलिये उसे मत देने का अधिकार नहीं दिया गया है।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या स्थिति यह है कि जब उपराष्ट्रपति राज्य-परिषद् के सभापति की हैसियत से काम करेगा तो उसे इस दशा में मत देने का अधिकार नहीं होगा?

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारतीः** (मद्रासः जनरल): सभापति की हैसियत से निर्णायक मत देने के अतिरिक्त।

***श्री एच.वी. कामतः** तब ठीक है।

अब मैं संशोधन संख्या 238 उठाता हूं। श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने अभी कहा कि मसौदा-समिति ने भी इस विषय पर तथा इस खंड पर विचार किया है और तदुपरान्त उस ने भी इसी के समान एक संशोधन का सुझाव रखा है। मैं यह नहीं चाहता कि मसौदा-समिति को उस के कठिन परिश्रम के लिये श्रेय न दिया जाये। यदि वह श्रेय लेना चाहती है तो अवश्य ले किन्तु, चूंकि संशोधन मेरे नाम से है इसलिये में उसे रस्मी तौर से उपस्थित करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि उसे स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्षः** उस की शब्दावलि कुछ भिन्न है किन्तु सार वही है। मैं यह माने लेता हूं कि वह उपस्थित कर दिया गया है। संशोधन संख्या 232, जो श्री नजीरुद्दीन अहमद के नाम से है, एक रस्मी संशोधन ही है।

(संशोधन संख्या 232 उपस्थित नहीं किया गया)

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान, संशोधन संख्या 233 के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि अनुच्छेद 100 में चार भिन्न पैरा हैं। पहला पैरा खंड (1) के रूप में रखा गया है, दूसरे पैरा को कोई संख्या नहीं दी गई है और तीसरे पैरा को संख्या 2 और चौथे पैरा को संख्या 3 दी गई है। दूसरे पैरा को कोई संख्या नहीं दी गई है। यह किसी भी विधि में एक अजीब सी बात है। सभी पैराओं की, या तो अनुच्छेदों के रूप में या खण्डों के रूप में, गणना करना आवश्यक है। साधारण अधिनियमों में उन की गणना धाराओं और उपधाराओं के रूप में होती है। जहां तक मेरा अनुभव है यह कभी नहीं हुआ कि एक पूरे पैरा को कोई

संख्या ही नहीं दी गई। संख्या देने का उद्देश्य यह है कि उन्हें ठीक ठीक जाना जा सके। जब तक हम दूसरे पैरा को संख्या 2 नहीं देंगे तब तक किसी निर्णय में अथवा पुस्तक में अथवा तर्क में उस की चर्चा करने में कठिनाई होगी। यह कहना पड़ेगा: खण्ड (1) के बाद आने वाला पैरा। इस कठिनाई को दूर करने के लिये मैंने यह सुझाव रखा है कि पैरा 2 को खंड (2) के रूप में रखा जाय और अन्य पैराओं की तदनुसार गणना की जाये। अनुच्छेद 189 में भी इसी प्रकार गणना नहीं हुई है। श्रीमान में अपने संशोधन को रस्मी तौर से उपस्थित करता हूं।

"अनुच्छेद 100 में खंड (1) का दूसरे पैरा की गणना खंड (2) के रूप में की जाये और खंड (2) और खंड (3) की गणना क्रमशः खंड (3) और खंड (4) के रूप में की जाये।"

***श्री राज बहादुरः** मेरे संशोधन संख्या 236 का आशय मसौदा-समिति के संशोधन संख्या 452 से पूरा हो जाता है। इस संशोधन के स्वीकार किये जाने का श्रेय उसी को दिया जाये किन्तु इससे जो प्रसन्नता हो सकती है। वह मुझे है।

(संशोधन संख्या 237 और 239 उपस्थित नहीं किये गये)

***श्री आर.के. सिधवाः** श्रीमान, मेरा संशोधन इस प्रकार है:

"अनुच्छेद 100 के खंड (3) में 'one-tenth [दशांश]' शब्द के स्थान पर 'one-sixth [षष्ठांश]' शब्द रखा जाये।"

श्रीमान, मैं गणपूर्ति-विषयक खंड (3) की चर्चा कर रहा हूं। पिछले सत्र में हम ने इस विषय पर पूर्ण रूप से विचार किया था और सभा ने यह निर्णय किया था कि संसद के प्रत्येक सदन में गणपूर्ति सदस्यों की सम्पूर्ण संख्या का षष्ठांश होगी। श्रीमान, अब मसौदा-समिति ने यह सुझाव रखा है कि वह दशांश हो। मेरा निवेदन है कि अन्तर्कालीन संसद में, जिसमें केवल 300 सदस्य होंगे दशांश का अर्थ होगा केवल 30 सदस्य और बाद में 500 सदस्यों की सभा में दशांश का अर्थ होगा 50 सदस्य। मैं नम्रतापूर्वक पूछता हूं कि क्या मसौदा-समिति यह चाहती है कि 35 करोड़ लोगों के नाम से केवल 30 लोग विधि-निर्माण करें? यह बहुत ही अनुचित है। हो सकता है कि कामन्स-सभा के 600 सदस्यों की संख्या की तुलना में उस सभा की गणपूर्ति की संख्या बहुत कम प्रतीत हो। श्रीमान, यह समझा जा सकता है। हम ने कामन्स सभा की कुछ अच्छी विधियों की नकल की है। किन्तु यदि कोई विधि खराब हो तो मैं नहीं चाहता कि उस की नकल की जाये। किन्तु सदस्यों से यह कहा जा रहा है कि वे बेकार बैठे रहें और चाहे वे सभा में जाये या न जायें उस के 50 अथवा 30 सदस्य सब कुछ कर लेंगे। मैं किसी सदस्य पर आक्षेप नहीं करना चाहता किन्तु साथ ही मेरा यह विचार

[श्री आर.के. सिधवा]

अवश्य है कि हम कार्य-संचालन के लिये इतने कम सदस्यों को रखें। इस के विपरीत इस आशय का एक उपबन्ध होना चाहिये कि सदस्यों को अपना कर्तव्य समझ कर सभी सत्रों में, विशेषत: जिन सत्रों में विधि-निर्माण हो उन में, भाग लेना चाहिये। इस लिये, मेरे विचार से, हमें संविधान में इस आशय का कोई खंड नहीं रखना चाहिये कि 500 सदस्यों की सभा में विधि-निर्माण के लिये केवल 50 सदस्य रहें।

***डॉ. बी. पट्टाभी सीमारमय्या** (मद्रास: जनरल): नियम यह नहीं है कि केवल 50 सदस्य ही रहें।

***श्री आर.के. सिधवा:** उस का प्रभाव वही हो जाता है। हमें भी कुछ अनुभव है। मैं यह नहीं कहता कि नियम में यह कहा गया है। किन्तु कई बार हम ने स्वयं देखा है कि यही हुआ है। क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि आज कितने सदस्य उपस्थित हैं? मेरे माननीय मित्र डॉ. पट्टाभी सीतारमय्या को यह अच्छी तरह विदित है। जब सदस्य नहीं उपस्थित रहते हैं तो हमें विदित है कि उन्हें ढूंढ कर लाने में कितनी कठिनाई होती है।

***डॉ. बी. पट्टाभी सीतारमय्या:** हम नहीं चाहते कि बेकार बैठे रहने और अकर्मण्यता को प्रोत्साहित किया जाये।

***श्री आर.के. सिधवा:** सदस्यों को भी अपना कर्तव्य समझना चाहिये और सभी सत्रों में उपस्थित रहना चाहिये। मेरे विचार से किसी ऐसे खण्ड की आवश्यकता नहीं है जिसके आधार पर वे बेकार रह सकें अथवा सत्र में उपस्थित न हों। उन्हें अपने कर्तव्यों का पालन करना है क्योंकि उन्हें लोगों ने निर्वाचित किया है। उन्हें भी अपने कर्तव्य का ध्यान होना चाहिये। इसलिये मेरे विचार से सभा के कार्य के संचालन के लिये सदस्य यथोचित संख्या में उपस्थित रहने चाहिये। मैं नहीं चाहता कि 600 सदस्य उपस्थित रहें, मैं नहीं चाहता कि 500 सदस्य उपस्थित रहें, मैं यह भी नहीं चाहता कि 250 सदस्य उपस्थित रहें। मैं केवल यह चाहता हूं कि वे यथोचित संख्या में उपस्थित रहें अर्थात् कम से कम 80 सदस्य उपस्थित रहें। क्या यह उचित नहीं है? मैं अपने माननीय मित्र, डॉ. पट्टाभी सीतारमय्या से पूछता हूं कि क्या उन्हें 50 सदस्यों से संतोष हो जायेगा? मुझे विदित है कि अकेले उन्हीं को असंतोष नहीं होगा। मैं उन से पूछता हूं कि क्या 500 सदस्यों में से 30 सदस्य पर्याप्त होंगे? कामन्स सभा का उदाहरण देने से कोई लाभ नहीं होगा। इस अनुच्छेद का अर्थ यह है कि स्थाई संसद में 50 सदस्यों से गणपूर्ति हो जायेगी और अन्तर्कालीन संसद में 30 सदस्यों से गणपूर्ति हो जायेगी। अन्तर्कालीन संसद में 300 के लगभग सदस्य होंगे। अगले वर्ष कई बड़ी बड़ी घटनाएं घटित होने जा रही हैं और हम संविधान में यह उपबन्धित करने जा रहे हैं कि अन्तर्कालीन संसद के 30 सदस्य विधि-निर्माण करेंगे। इस विषय के सम्बन्ध में मेरी प्रबल

भावनाएं हैं और मैं यह भी कहूंगा कि यदि सत्र में भाग लेने के लिये सदस्यों के लिये, यदि उचित समझा जाये तो निर्योग्यता भी रखी जाये। एक खंड इस आशय का रखा जा सकता है कि जो लोग सभा में नियमित रूप से उपस्थित नहीं होंगे वे निर्योग्य घोषित कर दिये जायेंगे। यदि मसौदा-समिति की यह धारणा हो कि इस प्रकार का कोई उपबन्ध रहे तो हम फिर सदस्यों से अपील भी कर सकते हैं कि वे सभा में उपस्थित हों। सदस्यों को भी कर्तव्यपालन का परिचय देना चाहिये। निर्वाचित होने के पश्चात् उन्हें कर्त्तव्य-पालन में इतनी लापरवाही नहीं दिखानी चाहिये और उन के निर्वाचन-क्षेत्र के लोगों ने उन्हें जिस कर्त्तव्य का पालन करने के लिये यहां भेजा है उस का उन्हें निर्वहन करना चाहिये। श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि जो संशोधन मैंने उपस्थित किया है उस पर पिछले सत्र में विचार-विमर्श हुआ था और वह पारित किया गया था। सम्भव है कि चूंकि हम यह अनुभव करते हैं कि सदस्य पर्याप्त संख्या में सभा में कठिनाई से उपस्थित होते हैं, इसलिये छोटी संख्या का सुझाव रखा गया है। इस के विपरीत मेरा निवेदन है कि छोटी संख्या न रखने के लिये यह और भी बड़ा कारण है। जब एक या दो बार सभा स्थगित होगी तो लोगों के ध्यान में आ जायेगा कि सदस्यों में उत्तरदायित्व की कितनी कमी है। वे हमेशा अनुपस्थित नहीं रह सकते। उन्हें लोगों को सफाई देनी होगी। यदि एक या दो बार सभा स्थगित होगी तो उन की बुद्धि ठिकाने आ जायेगी और वे सभा में जिस कार्य के लिये भेजे गये हैं उस के संचालन के लिये फिर पहले से अधिक नियमित रूप से उपस्थित होने लगेंगे। मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जाए।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान्, मैं यह विचार कर रहा था कि यदि सभा से सदस्य उठ कर चल दिये तो कैसी स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। हम ने इस पर पूर्ण रूप से विचार नहीं किया है कि आगे चल कर देश में कौन सी राजनैतिक घटनाएं घटित होंगी। यदि सदस्य उठकर चले गये तो संविधान का अन्त हो जायेगा। बिना अधिक कठिनाइयों के काम चलाते रहने के लिये यह आवश्यक है कि गणपूर्ति के लिये छोटी संख्या रखी जाये। इस से सदस्यों के लिये सभा में आने तथा उपस्थित रहने में कोई रुकावट नहीं होगी। हम इस आशय की कोई विधि पारित नहीं कर रहे हैं कि केवल 30 सदस्य ही विधान-मंडल की बैठकों में उपस्थित रहें। हम केवल गणपूर्ति का निर्णय कर रहें हैं। यदि हम यह चाहते हैं कि गत्यवरोध न हो तो हमें गणपूर्ति के लिये छोटी संख्या रखनी चाहिये।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अपने माननीय मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद के इस सुझाव का समर्थन करता हूं कि सभी पैराओं की गणना की जानी चाहिये।

मैं एक और सुझाव भी प्रस्तुत करना चाहता हूं, और वह यह है कि इस अनुच्छेद का अन्तिम भाग, जिस में कहा गया है कि "गणपूर्ति सदन के सदस्यों

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

की सम्पूर्ण संख्या का दशांश होगी", खंड (3) के पूर्व आना चाहिये क्योंकि खंड (3) में यह निर्धारित किया जा रहा है कि गणपूर्ति न होने का क्या परिणाम होगा। गणपूर्ति की संख्या क्या होगी यह वर्तमान अनुच्छेद में बाद में कहा गया है अर्थात् इस का उल्लेख उचित स्थल पर नहीं है। हमें पहले यह निर्धारित करना चाहिये कि गणपूर्ति की संख्या क्या होगी और फिर परिणामों का उल्लेख करना चाहिये। यह एक छोटा सा सुझाव है और मेरे विचार से इसे स्वीकार कर लेना चाहिये।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 452 में यह सुझाव स्वीकार कर लिया गया है।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** इसके अतिरिक्त मैं अपने माननीय मित्र श्री सिधवा के इस मत का समर्थन करता हूं कि गणपूर्ति सदस्यों की सम्पूर्ण संख्या की षष्ठांश हो और दशांश न हो।

***अध्यक्षः** अब सभा स्थगित होती है। हम तीन बजे फिर बैठक कर रहे हैं।

इसके पश्चात् सभा दोपहर के भोजन के लिये तीन बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

सभा तीन बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में फिर समवेत हुई।

***अध्यक्षः** अब हम उन संशोधनों को उठायेंगे जो अवशिष्ट अनुच्छेदों के सम्बन्ध में हैं अनुच्छेद 128।

***श्री जसपत राय कपूरः** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): क्या मैं अनुच्छेद 100 के सम्बन्ध में एक शब्द कह सकता हूं?

***अध्यक्षः** जी हां।

***श्री जसपत राय कपूरः** अध्यक्ष महोदय, अभी घंटी बजने के कारण सभा में गणपूर्ति न होने और सभा में जल्दी उपस्थित होने के लिये हमें जो चेतावनी मिली है उसी से गणपूर्ति विषयक इस संशोधन पर बोलने के लिये मुझे प्रलोभन हुआ है। मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा ने गणपूर्ति को षष्ठांश से घटा कर दशांश न करने के सम्बन्ध में जिस जोश से अपना तर्क उपस्थित किया है उस से भी मैं इस विषय पर बोलने के लिये प्रेरित हुआ हूं। उन्होंने जिस जोश खरोश के साथ अपना भाषण दिया उस से यह समझा जा सकता है कि इस सभा के सदस्यों की शक्तियों तथा उन के विशेषाधिकारों और अधिकारों को कम करने का प्रयास

किया जा रहा है किन्तु बात यह नहीं है। संशोधन द्वारा गणपूर्ति की संख्या घटाने का जो प्रस्ताव उपस्थित किया गया है वह बहुत बुद्धिमत्तापूर्ण, आवश्यक तथा उपयोगी प्रस्ताव है और उसे स्वीकार कर लेना चाहिये। वह हमारे इस सभा के ही नहीं बल्कि दूसरी सभा अर्थात् डोमीनियन संसद् के भी पिछले अनुभव पर आधृत है। मुझे यह दिखाई देता है कि उस अनुभव का मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या वह अनुभव प्रशंसनीय है?

***श्री जसपत राय कपूर:** उस अनुभव से हमें शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। मेरे विचार से उस में न तो सदस्यों के सम्बन्ध में और न सभा के सम्बन्ध में कोई बात ऐसी है जिसे निन्दनीय कहा जा सकता है। जब संसद् समवेत हो तो, मेरे विचार से, यह आशा नहीं करनी चाहिये कि सभी सदस्य पूरे समय के लिये उपस्थित रहेंगे, चाहे वे उस विशेष विषय में दिलचस्पी रखते हों या नहीं रखते हों जो किसी दिन या किसी समय विचाराधीन हो। इस से उन सदस्यों का समय तो नष्ट होगा ही किन्तु साथ ही करदाता को भी बेकार में अधिक खर्च उठाना होगा। मेरे विचार से आशा यही करनी चाहिये कि सदस्य सभा में तभी आयेंगे जब विचाराधीन विषय में उन की दिलचस्पी होगी अन्यथा वे अन्यत्र अपने निजी कार्यों में नहीं बल्कि देश के कल्याण में अपने समय का सदुपयोग कर सकते हैं। आखिर यह आशा क्यों की जाती है कि 500 सदस्यों में से सभी प्रात: काल से दोपहर तक और दोपहर से शाम तक सारे वर्ष अथवा लगभग सारे वर्ष सभा में बैठे रहेंगे? श्री सिधवा प्राय: इस की मांग करते रहे हैं कि संसद अधिक काल तक समवेत रहे और यदि अगले दो वर्षों में, अथवा उस के पश्चात् बहुत से सदस्यों का मत वही रहा जो श्री सिधवा का है तो संसद वर्ष में आठ या दस मास तक समवेत रहेगी। यदि 500 सदस्यों से यह कहा जायेगा कि, चाहे विचाराधीन विषयों में उन की दिलचस्पी हो या न हो किन्तु वे अपना सब समय यहीं बितायें तो वे अपने अधिक महत्वपूर्ण कार्यों को समय नहीं दे सकेंगे।

जो सदस्य यहां लोक-प्रतिनिधि हो कर आयेंगे वे सब उत्तरदाई लोग होंगे और उन्हें न केवल संसद में बल्कि अन्यत्र, देश के राजनैतिक क्षेत्र में भी अपने कर्तव्यों का पालन करना होगा। मैं यह समझता हूं कि हम उन से यह आशा करते हैं कि वे देश में रचनात्मक कार्य में अधिक से अधिक समय लगायेंगे और देश की अधिक से अधिक सार्वजनिक संस्थाओं की देख-रेख करेंगे और यहां आकर ऐसी बातों को चुपचाप देखते न रहेंगे जिन में उन की कोई दिलचस्पी न हो। गणपूर्ति को घटा कर सभा के सदस्यों की सम्पूर्ण संख्या का दशांश करने के सम्बन्ध में जो संशोधन है उस से सदस्यों के अधिकारों अथवा विशेषाधिकारों में कोई हस्तक्षेप नहीं होता। श्री सिधवा तथा अन्य कोई सदस्य इस सभा में जितने समय तक रहना चाहे रहें। यदि कोई सदस्य कई भाषण देना चाहे, अथवा कई प्रश्न पूछना चाहे अथवा कई संशोधन उपस्थित करना चाहे और लम्बे लम्बे भाषण देना चाहे, भले ही वे अच्छे हों या बुरे या उदासीन तो उसे इस के लिये पूर्ण स्वतंत्रता होगी।

[श्री जसपत राय कपूर]

कोई व्यक्ति जो सभा में बोल रहा हो अथवा सभा का बहुत सा समय स्वयं ले रहा हो यह आशा क्यों करे कि उसे हमेशा भरी सभा सुने? उसे बोलने का विशेषाधिकार प्राप्त हो सकता है किन्तु वह इस संतोष की आशा नहीं कर सकता कि हमेशा उसे भरी सभा सुनेगी। मेरा निवेदन है कि सरकार की दृष्टि से, करदाता की दृष्टि से, सदस्यों की दृष्टि से भी और देश के लिये ठोस कार्य करने की दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि गणपूर्ति की संख्या जितनी कम हो सके उतनी कम रखी जाये। सरकार की दृष्टि से तो यह आवश्यक है ही क्योंकि यदि गणपूर्ति के अभाव के कारण विधान-मंडल के कार्य में विलम्ब हो गया तो वह असमंजस में पड़ जायेगी। करदाता की दृष्टि से तो यह आवश्यक है ही क्योंकि यदि सभी सत्रों में सभी सदस्य आयेंगे तो दैनिक भत्तों के रूप में बहुत धन व्यय होगा। सदस्यों की दृष्टि से भी यह आवश्यक है क्योंकि, जैसा कि मैं कह चुका हूं, सभा के बाहर उन्हें अधिक से अधिक रचनात्मक कार्य करना चाहिये और सभा में तभी आना चाहिये जब वह विचाराधीन विषयों में दिलचस्पी रखते हों।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** अन्यथा उन्हें चांदनी चौक चला जाना चाहिये। *(हास्य)*

***श्री आर.के. सिधवा:** वाह, वाह।

***श्री जसपत राय कपूर:** डॉ. देशमुख चांदनी चौक जा सकते हैं अथवा यदि उन की दिलचस्पी किसी अन्य मनोरम स्थान में हो तो वहां जा सकते हैं किन्तु सब सदस्य हमेशा दिल्ली में क्यों रहें? वे अपने अपने स्थानों में कार्य कर सकते हैं और यहां समय नष्ट न कर के सारवान रचनात्मक, राजनैतिक, आर्थिक और समाजिक कार्य कर सकते हैं। इस लिये मेरा निवेदन है कि गणपूर्ति को सदस्यों की सम्पूर्ण संख्या का षष्ठांश न रख कर दशांश रखने के सम्बन्ध में जो सुझाव रखा गया है वह बहुत बुद्धिमत्तापूर्ण तथा उपयोगी सुझाव है और वह स्वीकार कर लिया जाना चाहिये।

(कुछ सदस्य अपनी जगहों से उठे)

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से इस साधारण संशोधन में इतने अधिक भाषण देने की आवश्यकता नहीं है। उस के सम्बन्ध में सदस्यों को सभी कुछ ज्ञात है और वे या तो उसे स्वीकार कर सकते हैं या अस्वीकार कर सकते हैं। अब हम अनुच्छेद 128 को तथा पंडित ठाकुर दास भार्गव के संशोधन संख्या 288 को उठायेंगे।

(संशोधन संख्या 288 उपस्थित नहीं किया गया)

***अध्यक्ष:** तब हम श्री कामत का संशोधन संख्या 289 उठाते हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 128 में 'the President may by order [राष्ट्रपति आदेश द्वारा] शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law [संसद विधि द्वारा]' शब्द रखे जायें।"

यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो यह अनुच्छेद इस प्रकार हो जायेगा:

"इस अध्याय में किसी बात के होते हुए भी, भारत का मुख्य न्यायाधिपति किसी समय भी राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से किसी व्यक्ति से, जो उच्चतम न्यायालय के या फेडरल न्यायालय के, न्यायाधीश का पद धारण कर चुका है, उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीश के रूप में बैठने और कार्य करने की प्रार्थना कर सकेगा, तथा इस प्रकार प्रार्थित प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को, इस प्रकार बैठने और कार्य करने के काल में, ऐसे भत्तों का जैसे कि संसद विधि द्वारा निर्धारित करे.... इत्यादि, इत्यादि।"

संविधान के मसौदे में इस का जो तत्स्थानी अनुच्छेद है, जिसे सभा ने मसौदे पर विचार करते समय स्वीकार किया था वह अनुच्छेद 107 है। उस में जो शब्द प्रविष्ट किये गये हैं वे ये हैं—"ऐसे भत्तों का, जैसे कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्धारित करे।" यदि इस सभा के मेरे माननीय सहकारी अनुच्छेद 125 के खण्ड (2) को देखें तो उन्हें ज्ञात होगा कि उस में यह निर्धारित है कि उच्चतम न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को "ऐसे विशेषाधिकारों और भत्तों का, तथा अनुपस्थिति छुट्टी और निवृत्ति-वेतन के बारे में ऐसे अधिकारों का, जैसे कि संसद्-निर्मित विधि के द्वारा या अधीन निर्धारित किये जायें,..... हक होगा"। मैं यह अनुभव करता हूं कि इस स्थल पर यह उपबन्ध एक अस्थाई उपबन्ध है किन्तु इस में विनियमन की शक्ति संघ के राष्ट्रपति को दी गई है। मेरी समझ में नहीं आता कि इस विषय के सम्बन्ध में भी यह क्यों नहीं कहा गया है कि इन्हें संसद विधि द्वारा निर्धारित करेगी। संसद यह उपबन्धित कर सकती है कि जब उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों अथवा फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों अथवा सेवानिवृत्त न्यायाधीशों से, क्योंकि यह अनुच्छेद सेवानिवृत्त न्यायाधीशों के सम्बन्ध में है, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के रूप में बैठने और कार्य करने की प्रार्थना की जाये तो उन के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश न होने पर भी संसद निर्धारित कर सकती है कि उन्हें कौन से भत्ते पाने का हक होगा। इसे राष्ट्रपति को नहीं बल्कि संसद को निर्धारित करना चाहिये। इन शब्दों के साथ श्रीमान, मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जाये।

***पंडित बालकृष्ण शर्मा:** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): श्रीमान, यदि श्री कृष्णमाचारी इस विषय पर प्रकाश डालेंगे तो उस से हमें कुछ सहायता मिलेगी। मेरा निवेदन है कि हमें बताया गया है कि भावी संविधान में अतिरिक्त न्यायाधीशों अथवा अस्थाई न्यायाधीशों को नहीं रखा गया है। यदि संविधान में वास्तव में अतिरिक्त न्यायाधीशों को नहीं रखा गया है तो क्या यह अनुच्छेद 128 हमारे उस निर्णय के अनुरूप है? उस निर्णय के होते हुए इस अनुच्छेद को कैसे रखा जा रहा है?

***अध्यक्ष:** यह प्रश्न अतिरिक्त न्यायाधीशों का नहीं है। किसी सेवानिवृत्त न्यायाधीशों को थोड़े समय के लिये अथवा किसी विशेष मामले के सम्बन्ध में कार्य करने के लिये प्रार्थना की जा सकती है। प्रश्न सेवानिवृत्त न्यायाधीश का है न कि अतिरिक्त

[अध्यक्ष]

न्यायाधीश का। किसी ऐसे व्यक्ति से, जो उच्चतम न्यायालय अथवा फेडरल न्यायालय का न्यायाधीश रह चुका हो, कार्य करने के लिये प्रार्थना की जा सकती है।

(संशोधन संख्या 290 उपस्थित नहीं किया गया)

(प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना अपनी जगह से उठे)

***अध्यक्ष:** हमें सूची 1 में दिये हुए सभी संशोधनों को समाप्त करना है। जो संशोधन उपस्थित नहीं किये गये हैं उन्हें हमें बिलकुल छोड़ देना होगा।

***एक माननीय सदस्य:** क्या वे रद्द हो जायेंगे?

***अध्यक्ष:** जी हां। वे सब संशोधन जो सूची 1 में दिये हुए हैं आज उपस्थित कर दिये जाने चाहियें। इसी कारण मैं सदस्यों से आरम्भ से ही कहता आया हूं कि उन्हें अपनी बात संक्षेप में कहनी चाहिये और न तो बोलने के लिये और न सारहीन संशोधनों को उपस्थित करने के लिये आग्रह करना चाहिये।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** मैं चाहता था कि यह निकाल दिया जाता क्योंकि यदि राष्ट्रपति को न्यायाधीशों के भत्तों को निर्धारित करने की शक्ति दी गई तो इस का यह अर्थ होगा कि वे राष्ट्रपति और कार्यपालिका के अधीन हो जायेंगे। यह बहुत ही अनुचित व्यवस्था होगी। यदि इन भत्तों को संसद निर्धारित करे तो बात दूसरी है।

श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 145 का खंड (1) का उपखंड (ग) निकाल दिया जाये और अनुच्छेद 145 के खंड (1) के पूर्व यह रखा जाए:

'The Supreme Court shall make rules for regulation the practice and procedure of the appropriate proceeding relating to the enforcement of rights conferred under part III.

[उच्चतम न्यायालय भाग 3 के अधीन प्रदत्त अधिकारों को प्रयोग में लाने की उपयुक्त कार्यवाही की कार्यप्रणाली और प्रक्रिया के विनियमन के लिये नियम बनायेगा।]' और बाद में आने वाले खण्डों की तदनुसार गणना की जाये।"

भाग 3 मूलाधिकारों के विषय में है। आप के मतानुसार न्यायालय के नियमों तथा उसकी प्रक्रिया को राष्ट्रपति निर्धारित करेगा। मैं यह चाहता हूं कि मूलाधिकार उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत हो। इसलिये मैंने यह प्रस्ताव उपस्थित किया है कि खण्ड (ग) निकाल दिया जाये और वह आरम्भ में स्वतंत्र रूप से रखा जाये। यह बहुत महत्वपूर्ण है। मूलाधिकारों का अनुमोदन करने या न करने की शक्ति राष्ट्रपति को नहीं प्राप्त होनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** किन्तु आप के संशोधन से सभा के पूर्वनिर्णय का खंडन होता है।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** जी नहीं। यह एक नवीन प्रस्ताव है। यह अनुच्छेद 185 का खंड (ग) ही है।

***अध्यक्ष:** जी नहीं। वह उस अनुच्छेद का खंड (ख) है।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** यह पृष्ठ 58 पर दिया हुआ खंड (ग) है।

***अध्यक्ष:** अच्छा, आप खंड (ग) की चर्चा कर रहे हैं।

***पंडित ठाकुरदास भार्गव:** संशोधन संख्या 308 और 309 का आशय बहुत कुछ समान ही है। मैं उनके सम्बन्ध में बोलना चाहता हूं। आरम्भ में मैंने संविधान के सम्बन्ध में एक संशोधन भेजा था, जो संशोधनों की सूची में संशोधन संख्या 109-क के रूप में छापा गया था। उस का प्रथम भाग इस प्रकार था:

> "उच्चतम न्यायालय को संविधान द्वारा प्रदत्त मूलाधिकारों को प्रयोग में लाने के सम्बन्ध में ही क्षेत्राधिकार प्राप्त होगा और संविधान के अनुच्छेद 25 में उल्लिखित यथोचित कार्यवाही की कार्य-प्रणाली तथा प्रक्रिया निश्चित करने तथा उस का विनियमन करने की शक्ति प्राप्त होगी।"

जब इसे उपस्थित किया गया था तो उस समय मैंने आप से प्रार्थना की थी कि इसे स्थगित रखा जाये किन्तु यह एक दुर्भाग्य की बात है कि द्वितीय पठन के अंतिम दिन इस संशोधन को आप ने अनियमित घोषित कर दिया। मुझे इस की प्रसन्नता है कि मसौदा-समिति ने उस सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया है जिस का मैं द्वितीय पठन के अवसर पर विधेयक में समावेश चाहता था। यद्यपि इस नियम (ग) के लिये मैं उस का आभारी हूं किन्तु मेरा निवेदन है कि वर्तमान रूप में वह एक निष्प्राण तथा खोखला नियम है। यदि आप कृपा कर के इस संविधान की पूरी योजना पर दृष्टि डालें तो आप को यह स्पष्ट हो जायेगा कि इन मूलाधिकारों से कार्यपालिका तथा विधान-मंडल के अधिकारों का भी परिसीमन होता है। विधान-मंडल अथवा कार्यपालिका इन अधिकारों में हस्तक्षेप नहीं कर सकती है और मेरा यह क्षुद्र मत है कि इन अधिकारों में जनसाधारण का सम्पूर्ण प्रभुत्व सन्निहित है। यदि ये अधिकार प्रयोग में रहेंगे तो प्रत्येक व्यक्ति हर प्रकार के अत्याचार से मुक्त रहेगा। इसलिये इन मूलाधिकारों को मैं सब से अधिक महत्व देता हूं किन्तु यह कहा नहीं जा सकता कि इन नवीन उपबन्धों के रहते हुए ये अधिकार कैसे प्रयोग में आयेंगे। यह सच है कि उच्चतम न्यायालय को इन अधिकारों को प्रयोग में लाने के सम्बन्ध में क्षेत्राधिकार प्रदान किया गया है। किन्तु अभी तक हम ने यह निर्धारित नहीं किया है कि उच्चतम-न्यायालय इन अधिकारों को प्रयोग में कैसे लायेगा। ये अधिकार विशेष प्रकार के आदेशात्मक अधिकार हैं। मैं कह नहीं सकता कि मुद्रांकों अथवा लेखों आदि के सम्बन्ध में अन्य न्यायालयों का क्षेत्राधिकार क्या है और उच्चतम न्यायालय क्या कार्यवाही कर सकता है।

[पंडित ठाकुरदास भार्गव]

किन्तु अनुच्छेद 25 के अधीन उच्चतम न्यायालय को इन अधिकारों को प्रयोग में लाने की शक्ति हो गई है। वास्तव में यद्यपि यह अधिकार पूर्ण अधिकार के रूप में दिया गया है किन्तु नियम बनाने की शक्ति देकर इस का न्यूनन किया जा रहा है। इन नियमों को बनाने की शक्ति केवल उच्चतम न्यायालय को दी जानी चाहिये। यदि यह शक्ति विधान-मंडल को दी गई, अथवा राष्ट्रपति की स्वीकृति अनिवार्य की गई, तो इस का अर्थ यह होगा कि मूलाधिकारों में हस्तक्षेप किया जायेगा।

श्रीमान, हमें यह विदित है कि मसौदा-समिति ने अन्तिम दिनों में इन मूलाधिकारों में हस्तक्षेप करने का प्रयास किया है। सोलहवां अधिकार निकाल दिया गया है। पन्द्रहवां अधिकार खण्डित कर दिया गया है और समायोजन के सम्बन्ध में जो शक्ति अपनाई गई है उस से ये अधिकार पहले के समान प्रभावपूर्ण नहीं रह जाते। महत्व इसे दिया जाना चाहिये कि जब इन अधिकारों के सम्बन्ध में उपबन्ध पारित किये जा चुके हैं तो तृतीय पठन के अवसर पर हम इतना परिवर्तनकारी उपबन्ध नहीं रखना चाहते। इन अधिकारों को उसी रूप में रखना चाहिये जिस रूप में ये आरम्भ में थे और उच्चतम न्यायालय को कोई अन्य ऐसी शक्ति नहीं देनी चाहिये जिस से इन अधिकारों का अपहरण हो सके। यह सभा के ध्यान में आ गया होगा कि मेरे मूल संशोधन संख्या 109-क का जो उद्देश्य था वह पूरा कर दिया गया है। मैं यह चाहता हूं कि इन अधिकारों को प्रयोग में लाने की कार्य-प्रणाली और प्रक्रिया का विनियमन करने के लिये नियम बनाने की शक्ति उच्चतम न्यायालय को ही दी जाये। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि खंड (1) से उपखंड (ग) निकाल दिया जाये और एक अन्य पृथक खंड (2) जोड़ दिया जाये ताकि भाग 1 में उल्लिखित विषयों के सम्बन्ध में मूलाधिकार प्रदान करने वाले अनुच्छेद 25 में वर्णित समुचित कार्यवाही की कार्यप्रणाली तथा प्रक्रिया का विनियमन करने की शक्ति केवल उच्चतम न्यायालय को ही प्राप्त हो।

***अध्यक्षः** क्या इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में कोई सज्जन बोलना चाहते हैं? तब हम अब अनुच्छेद 148 को उठायेंगे। संशोधन संख्या 312, श्री बी. दास।

***श्री बी. दासः** मैं उसे नहीं उपस्थित कर रहा हूं।

***श्री राज बहादुरः** मैं भी उसे नहीं उपस्थित कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** श्रीमती दुर्गाबाई। वे यहां नहीं हैं, संशोधन संख्या 313, श्री बी. दास।

***श्री बी. दासः** श्रीमान, मैं इस संशोधन को उपस्थित करता हूं, जो मेरे तथा मेरे मित्र श्री राज बहादुर के नाम से है। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "अनुच्छेद 148 के खंड (5) में 'persons serving in the office [सेवा करने वाले व्यक्तियों]' शब्दों के स्थान पर members of the staff' [कर्मचारी-वर्ग के लोगों] शब्द रखे जायें।"

यह वास्तव में मेरा संशोधन नहीं है। इसे सभा ने स्वयं बहुत विचार-विमर्श के पश्चात् पारित किया था। मसौदा-समिति ने, सम्भवतः भूल से इसे इस प्रकार रख दिया है। अभी पंडित ठाकुर दास भार्गव ने उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के पद तथा प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में जो तर्क उपस्थित किया था वही मेरा भी तर्क है। यदि हमें भारत की सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न सरकार को बनाये रखना है तो हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि स्थाई कार्यपालिका किसी प्रकार उच्चतम न्यायालय, महा-लेखापरीक्षक और संघीय लोक-सेवा-आयोग के कार्य में हस्तक्षेप नहीं कर सके। सभा ने बहुत काल तक इन अनुच्छेदों पर विचार-विमर्श किया था। ये अनुच्छेद पहले के अनुच्छेद 124 और 125 थे और अब ये अनुच्छेद 148 और अनुच्छेद 149 के रूप में रखे गये हैं। सभी ने यह निर्धारित किया था कि लेखा-नियंत्रण द्वारा महा-लेखापरीक्षक को वित्तीय विषयों के सम्बन्ध में बहुत ऊंची कोटि की सच्चाई बनाये रखना चाहिये और भारत-सरकार के वित्त को लेखा-परीक्षण करने तथा उस पर नियंत्रण रखने में महा-लेखापरीक्षक के कार्य में स्थाई कार्यपालिका को किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप न करना चाहिये।

हम व्यवसाई लोग, जो व्यवसाय-विषयक वित्त से परिचित हैं, कभी देखते हैं कि कम्पनियों के बोर्डों के डाइरेक्टर लेखा-परीक्षकों पर प्रभाव डालते हैं और गलत प्रतिवेदन छापे जाते हैं। इस प्रथा का प्रचलन भारत सरकार में नहीं होना चाहिये। दुर्भाग्य से विदेशियों के शासन-काल में 1921 से लेकर 1947 तक, केवल दो वर्ष पूर्व तक, यह प्रथा प्रचलित रही। महा-लेखापरीक्षक का कोई अस्तित्व ही नहीं रह गया था। सार्वजनिक वित्त का लेखा-परीक्षण नहीं होता था। अंग्रेज शासकों ने यह भी निर्णय कर लिया था कि जब तक महा-लेखापरीक्षक अथवा महांकिक और लेखा-परीक्षण के निदेशक के समान उस के कर्मचारी विभाग के सचिव अथवा विभाग के प्रधान के बीच सहमति न हो तब तक वित्त-विषयक कोई भी अनियमित बात न तो लोक-लेखा-समिति और न संसद के ध्यान में लाई जायेगी। यह 1927 में हुआ था और द्वितीय युद्ध के समय इसी प्रथा का अनुसरण किया जाता था। इस प्रकार की प्रथा को न रहने देने के लिये हमने यह विचार किया कि महा-लेखापरीक्षक के उच्च पद तथा प्रतिष्ठा को बनाये रखना चाहिये। इसलिये हम यह चाहते हैं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार कर ले और अनुच्छेद 148(5) में "कर्मचारि-वर्ग के लोगों" शब्द रखे जायें ताकि प्रत्येक महांकिक तथा लेखाधिकारी की पदोन्नति किसी विभाग के, अथवा धन व्यय करने वाले विभाग के, प्रधान की इच्छा पर निर्भर न रहे। मुझे मसौदा-समिति ने आश्वासन दिया है कि वह मेरे संशोधन को स्वीकार कर लेगी। श्रीमान मैं इस सम्बन्ध में और कुछ नहीं कहना चाहता।

***अध्यक्षः** श्रीमती जी. दुर्गाबाई, संशोधन संख्या 314। वे यहां नहीं हैं। संशोधन संख्या 315, श्री दास।

***श्री बी. दासः** मैं उसे नहीं उपस्थित कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 316।

***श्री राज बहादुरः** श्रीमान्, मैं उसे नहीं उपस्थित कर रहा हूं किन्तु मैं संशोधन संख्या 313 पर बोलना चाहता हूं।

महा-लेखापरीक्षक के कर्त्तव्यों तथा पद पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस पदाधिकारी को कार्यपालिका के प्रभाव से मुक्त होना चाहिये। वास्तव में उस की स्थिति बहुत कुछ उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की स्थिति के समान ही है। वह हमारे वित्त का धरोहरी, और मैं कहूंगा कि हमारे वित्त का चौकीदार है। वह कार्यपालिका और करदाता के मध्य में प्रहरी रूप से स्थित रहता है। वह हमारे वित्त को नष्ट-भ्रष्ट होने से बचाता है।

मुझ से पूर्व बोलने वाले वक्ता महोदय ने जो कुछ कहा है उसके आगे मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि हम में से उन लोगों का, जो लोक-लेखा-समिति में रहे हैं, यह दुखद अनुभव रहा है कि 1945 और 1946 के बीच, अथवा यों कहिये कि देश-विभाजन और स्वतन्त्रता के पूर्व देश के लेखे के सम्बन्ध में इतनी अनियमित बातें तथा गम्भीर दोष दिखाई दिये कि हम इस परिणाम पर पहुंचे कि उस पदाधिकारी को कार्यपालिका के प्रभाव से बिल्कुल मुक्त रखने से ही देश का कल्याण हो सकता है। मैं नम्रतापूर्वक निवेदन करता हूं कि उसे कार्य पालिका के नियन्त्रण से बिल्कुल मुक्त रखना चाहिये। मैंने एक संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 312, भेजा था जिस का आशय यह था कि उस के वेतन को ही नहीं बल्कि उस के भत्तों को भी संसद को निर्धारित करना चाहिये और राष्ट्रपति अथवा सरकार को निर्धारित नहीं करना चाहिये। हम देखते हैं कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन और भत्ते सरकार द्वारा दिये जाने वाले उपहार नहीं हैं बल्कि वास्तव में वे संविधान के विषय हैं। मैं इस से भी आगे बढ़ना चाहता हूं और यह निवेदन करना चाहता हूं कि उन्हें संसद् को भी स्वविवेक से निर्धारित नहीं करना चाहिये और संविधान में ही इस सम्बन्ध में उपबन्ध होने चाहियें क्योंकि यदि इस पदाधिकारी को पूर्णतया स्वतन्त्र बनाया गया तो उस से देश का हित साधन होगा। कम से कम विधान-मंडल और इस पदाधिकारी के बीच कोई खाई नहीं होनी चाहिये।

यदि हम यह चाहें कि वह योग्यता से तथा यथोचित रूप से कार्य करे तो उस के कर्मचारी भी उस के ही अधीन होने चाहिये। यदि उसके कर्मचारियों को मंत्रिमंडल अथवा कार्यपालिका के नियंत्रण के अधीन रखा गया और उन्हें अपनी पदोन्नति तथा भविष्य के लिये मंत्रियों का मुंह ताकना पड़ा तो यह स्पष्ट है कि महा-लेखापरीक्षक अपने कर्मचारियों पर यथोचित नियंत्रण नहीं रख सकेगा। इसलिये जब हमने दुहराये हुए मसौदे में "कर्मचारी-वर्ग के लोगों" शब्दों के स्थान पर "सेवा करने वाले व्यक्तियों" शब्दों को देखा तो हमें आश्चर्य भी हुआ और दुख भी हुआ क्योंकि इस परिवर्तन के परिणाम-स्वरूप महा-लेखापरीक्षक केवल उन लोगों पर नियन्त्रण रख सकेगा जो किसी समय उस के विभाग में कार्य करते हों। उचित यही समझा गया कि कि इस सभा ने आरम्भ में जिन शब्दों का अनुमोदन किया था उन्हीं को रहने दिया जाये। इसी कारण यह संशोधन उपस्थित किया गया है।

मैं एक अन्य बात पर भी जोर देना चाहता हूं और वह यह है कि चूंकि महा-लेखापरीक्षक लोगों के विश्वास-पात्र उच्चतम पदाधिकारियों में से एक होगा इस लिये इस आशय का एक उपबन्ध रखा गया है कि उसके लिये यह आवश्यक है कि वह अपनी पदावधि के समाप्त होने पर सरकार के किसी अन्य पद के लिये नियुक्त नहीं किया जाये। जब उस पदाधिकारी का पद इतना ऊंचा बनाया गया है तो उचित यही है कि अपने कर्मचारियों पर भी उसी पदाधिकारी का नियन्त्रण रहे। इन शब्दों के साथ में सभा से सिफारिश करता हूं कि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 154, श्री कामत।

***श्री एच. वी. कामत:** श्रीमान, ये संशोधन भी बिल्कुल उन्हीं संशोधनों के समान हैं जो आज प्रात: उपस्थित किये गये थे। मैं चाहता हूं कि इन पर तथा प्रात: उपस्थित किये गये संशोधनों पर मसौदा-समिति ही विचार करे।

***अध्यक्ष:** तब मैं यह मान लेता हूं कि संशोधन संख्या 320 और 321 उपस्थित नहीं किये गये हैं। अनुच्छेद 162 के सम्बन्ध में संशोधन संख्या 324 का आशय भी इसी संशोधन के आशय के समान है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** जी हां, श्रीमान।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 164 के सम्बन्ध में संशोधन संख्या 328 और 329 को उठाते हैं—श्री कामत। संशोधन संख्या 328 का प्रश्न नहीं उठता। श्री कामत आप संशोधन संख्या 329 उपस्थित कर सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 164 के खंड (1) के परन्तुक में 'Koshal Vidarbh [कोशल-विदर्भ]' शब्दों के स्थान पर 'Madhya Pradesh [मध्य प्रदेश]' शब्द रखे जायें।"

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या मैं माननीय सदस्य महोदय के समक्ष यह सुझाव रख सकता हूं कि वे इस प्रस्ताव को उस समय उपस्थित करें जब हम तद्विषयक अनसूची को उठायें? जब उस स्थल पर हम इस संशोधन को स्वीकार कर लेंगे तो इस अनुच्छेद में भी आनुषंगिक संशोधन किया जा सकता है।

***श्री एच.वी. कामत:** अच्छी बात है।

***अध्यक्ष:** श्री ए.वी. ठक्कर ने तीन संशोधनों की अर्थात् संशोधन संख्या 329-क, 330 और 331 की सूचना दी है। माननीय सदस्य यहां उपस्थित नहीं हैं। इस लिये अब हम अनुच्छेद 166 उठायेंगे। (संशोधन संख्या 332)।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** मेरे संशोधन (संख्या † 332) के सम्बन्ध में यह समझा जाये कि वह रस्मी तौर से उपस्थित कर दिया गया है।

---

† 332 "अनुच्छेद 166 का खंड (3) निकाल दिया जाये।"

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या †333, †334 और †335 के सम्बन्ध में मैं यह सूचित करना चाहता हूं कि केन्द्रीय सरकार के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार के संशोधन उपस्थित किये गये हैं। इसलिये मैं वह माने लेता हूं कि ये रस्मी तौर पर उपस्थित कर दिये गये हैं। 336 से लेकर 339 तक जो संशोधन हैं उन्हें उपस्थित करने से कोई लाभ नहीं होगा। इसलिये हम श्री कामत के संशोधन संख्या 340 और 341 को उठायेंगे।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 172 के खंड (1) में 'no longer [इस से अधिक नहीं]' शब्दों के पश्चात्, एक कामा प्रविष्ट किया जाये।"

"अनुच्छेद 172 के खंड (2) में 'possible [यथाशक्य]' शब्द के स्थान पर 'practicable [यथाव्यवहार्य]' शब्द रखा जाये।"

जहां तक पहले संशोधन का सम्बन्ध है मैं अपने अंग्रेजी के थोड़े बहुत ज्ञान के आधार पर कह सकता हूं कि वाक्य-रचना के नियमों के अनुसार 'लांगर' शब्द के पश्चात् एक कामा की आवश्यकता है।

दूसरे संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 341 के सम्बन्ध में मेरी यह धारणा है कि इस प्रसंग में "यथाव्यवहार्य" शब्द अधिक उपयुक्त है। मेरे विचार से विचार-विमर्श करते समय पहले मसौदे में सभा ने "जहां तक हो सकेगा" शब्द रखे थे। "यथाशक्य" और "यथाव्यवहार्य" शब्दों में बहुत सूक्ष्म विभेद है जो इस सभा के माननीय सदस्यों के ध्यान में आ गया होगा। उदाहरणार्थ यदि किसी राज्य की विधान-परिषद् में 32 सदस्य हुए तो "यथाव्यवहार्य निकटतम एक तिहाई" से अभिप्रेत होगा 11 सदस्य। इसके विपरीत "यथाशक्य" शब्द से भ्रम हो सकता है क्योंकि कोई बात ऐसी नहीं है जो शक्य न हो। संसार में प्रत्येक बात शक्य कही जा सकती है किन्तु ''यथाव्यवहार्य" शब्द का वास्तविकता से सम्बन्ध होगा। यहां हम वास्तविकता के सम्बन्य में उपबंध रख रहे हैं। इस अनुच्छेद के इस खंड का आशय "यथाशक्य" की अपेक्षा "यथाव्यवहार्य" शब्द से अधिक सुचारु रूप से व्यक्त होगा।

---

†333 "अनुच्छेद 166 के खंड (3) में जहां 'Governor [राज्यपाल]' शब्द पहली बार आया है उस के स्थान पर 'Premier [प्रधान मंत्री]' शब्द रखा जाये।"

†334 "अनुच्छेद 166 के खंड (3) में 'more convenient [अधिक सुविधापूर्वक]' शब्दों के स्थान पर 'efficient [योग्यतापूर्वक]' शब्द रखा जाये।"

†335 "अनुच्छेद 166 के खंड (3) में से 'in so far as it is not business with respect to which the Governor is by or under this Constitution required to in his discretion [तथा जहां तक वह कार्य ऐसा कार्य नहीं है जिस के विषय में इस संविधान के द्वारा या अधीन अपेक्षित है कि राज्यपाल स्वविवेक से कार्य करे वहां तक]' शब्द निकाल दिये जायें।"

***अध्यक्षः** मैं संशोधन संख्या †343, †344, †345 और †346 के सम्बन्ध में मान लेता हूं कि वे उपस्थित कर दिये गये हैं। अब हम अनुच्छेद 189 को उठायेंगे (संशोधन संख्या 347)।

***श्री एच.वी. कामतः** संशोधन संख्या †347 के सम्बन्ध में मैं एक बात कहना चाहता हूं। श्रीमान, यह समझ में आता है कि संसद् के समान एक बड़ी सभा

---

†343 "अनुच्छेद 181 के खंड (2) में 'and shall, notwithstanding anything in article 189, be entitled to vote only in the first instance on such resolution or on any other matter during such proceedings but not in the case of equality of votes [तथा, अनुच्छेद 189 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसे संकल्प पर, अथवा ऐसी कार्यवाहियों में किसी अन्य विषय पर प्रथमतः ही मत देने का हक होगा किन्तु मत साम्य होने की दशा में न होगा]' शब्दों के स्थान पर 'but notwithstanding anything in article 189, shall not be entitled to vote on such resolution or on any matter during such proceedings [परन्तु, अनुच्छेद 189 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसे संकल्प पर अथवा ऐसी कार्यवाहियों में किसी विषय पर मत देने का हक नहीं होगा]' शब्द रखे जायें।"

†344 "अनुच्छेद 181 के खंड (2) में 'anything in article 189 [अनुच्छेद 189 में किसी बात]' शब्दों और अंक के स्थान पर 'anything contained in article 189 [अनुच्छेद 189 में उल्लिखित किसी बात]' शब्दों और अंक को रखा जाये।"

†345 "अनुच्छेद 185 के खंड (2) में 'and shall, notwithstanding anything in article 189 be entitled to vote only in the first instance on such resolution or on any other matter during such proceedings but not in the case of equality of votes [तथा अनुच्छेद]' 189 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसे संकल्प पर, अथवा ऐसी कार्यवाहियों में किसी अन्य विषय पर प्रथमतः ही मत देने का हक होगा किन्तु मत साम्य होने की दशा में न होगा]' शब्दों के स्थान पर 'but notwithstanding anything in article 189, shall not be entitled to vote on such resolution or on any matter during such proceedings [परन्तु, अनुच्छेद 189 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसे संकल्प पर अथवा ऐसी कार्यवाहियों में किसी विषय पर मत देने का हक नहीं होगा]' शब्द रखे जायें।"

†346 "अनुच्छेद 185 के खंड (2) में 'anything in article 189 [अनुच्छेद 189 में किसी बात]' शब्दों और अंक के स्थान पर 'anything contained in article 189 [अनुच्छेद 189 में उल्लिखित किसी बात]' शब्दों और अंक को रखा जाये।"

†347 "अनुच्छेद 189 के खंड (3) के दूसरे पैरा में 'the quorum shall, until the Legislature of the State by law otherwise provides [गणपूर्ति जब तक राज्य का विधान-मंडल विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित न करे]' शब्दों के स्थान पर 'until the Legislature of the State by law otherwise provides, the quorum shall [जब तक राज्य का विधान-मंडल विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित न करे, गणपूर्ति]' शब्द रखे जायें।"

[श्री एच.वी. कामत]

के लिये गणपूर्ति की संख्या सदस्य-संख्या का दशांश रखी जा सकती है कि किन्तु यदि राज्यों के लिये भी यही संख्या रखी गई तो इसका परिणाम कभी बड़ा विचित्र होगा। इस समय ऐसे राज्य भी हैं जिन के अवर सदनों में एक सौ अथवा एक सौ बीस से अधिक सदस्य नहीं हैं। जब तक नवीन संविधान प्रारम्भ नहीं होगा और निर्वाचनों के पश्चात् उन की फिर से रचना नहीं होगी तब तक वे ऐसे ही रहेंगे। उदाहरणार्थ मध्यप्रान्त और बरार की विधान-सभा में इस समय लगभग 120 सदस्य हैं। यदि गणपूर्ति की संख्या उस की सदस्य संख्या की दशांश रखी गई तो इस का अर्थ यह होगा कि किसी भी विधि को पारित करने के लिये बारह सदस्य पर्याप्त होंगे। यह तर्क उपस्थित किया गया है कि कामन्स सभा में गणपूर्ति की संख्या सदस्य-संख्या की केवल पन्द्रहवां अंश है। यह बात समझ में आती है क्योंकि उस सभा में छः सौ सदस्य हैं। हमारे यहां मैसूर की विधानसभा में केवल 70 सदस्य होंगे और उस में गणपूर्ति की संख्या सात होगी। उसमें कोई सन्देह नहीं कि हम यह उपबन्धित कर रहे हैं कि गणपूर्ति की संख्या कम से कम दस होनी चाहिये। ऐसी हास्यास्पद व्यवस्था करने के बजाय अच्छा यह होगा कि हम लोकतन्त्र को तिलांजलि दें और अपने अपने घरों को वापस चले जायें।

श्रीमान, मेरी अपनी यह धारणा है कि जिन विधान-मंडलों में केवल साठ से लेकर एक सौ बीस सदस्य तक हैं, हमें गणपूर्ति की संख्या सदस्य संख्या की पंचमांश अथवा षष्ठांश निर्धारित करनी चाहिये। वर्तमान उपबन्ध को रख के हमें संसार में अपनी हंसी नहीं करानी चाहिये।

***श्री आर. के. सिधवा:** श्रीमान, अनुच्छेद 189 के सम्बन्ध में मेरा संशोधन इस प्रकार है:

> "अनुच्छेद 189 के खंड (3) में 'ten [दस]' और 'one tenth [दशांश]' शब्दों के स्थान पर क्रमशः 'twenty [बीस]' और 'one eighth [अष्ठांश]' शब्द रखे जायें।"

संघीय संसद की गणपूर्ति के सम्बन्ध में मैंने जो तर्क उपस्थित किये थे उन्हीं को मैं इस सम्बन्ध में भी उपस्थित करता हूं। मेरे मित्र श्री कपूर ने जो तर्क उपस्थित किये हैं उन का मैं समर्थन नहीं करता। इस के विपरीत यह स्मरण रखना चाहिये कि भावी-संसद् को वर्ष में कम से कम नौ मास तक समवेत रहना होगा। यदि किन्हीं सदस्यों को अन्य कार्य करना हो तो वे उसे करें और सभा में बैठ कर लोगों ने उन्हें जिस कार्य के लिये भेजा है उसे अनुपयुक्त ढंग से न करें। मेरी अपनी यह धारणा है कि संसद के अगले चुनाव के पश्चात् जो सदस्य यहां आयें वे केवल संसद का ही कार्य करें। यदि वे वास्तव में कोई अन्य कार्य करना चाहें तो करें किन्तु उन्हें संसद की सदस्यता पर भी अधिकार नहीं जमाये रहना चाहिये और अन्य राजनैतिक कार्य भी नहीं करते

रहना चाहिये। हमें अब इस सम्बन्ध में निर्णय कर लेना चाहिये विशेषतया इस अवसर पर जब हम संविधान के इस भाग का निर्माण कर रहे हैं। मेरे मित्र भी कह चुके हैं और मैं भी यह चाहता हूं कि हर समय 500 सदस्य उपस्थित न रहें। मेरा निवेदन है कि सदस्य-संख्या का कम से कम आठवां अंश, अर्थात् कम से कम बीस सदस्य उपस्थित रहने चाहिये।

***श्री महावीर त्यागी:** तब सभा में केवल बेकार लोग ही रहेंगे।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैंने बीस सदस्य कहा है। क्या गणपूर्ति के लिए बीस सदस्यों की भी आवश्यकता नहीं है? मतदान के समय सभा को मसौदा-समिति के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देना चाहिये और अपने पहले किये हुए निर्णय को स्वीकार करना चाहिये।

अब मैं अपना अगला संशोधन उपस्थित करता हूं। वह इस प्रकार है:

"अनुच्छेद 222 के खंड (1) के अन्त में ये शब्द जोड़ दिये जायें:—

'only when urgency arises [केवल जब कि यह अत्यावश्यक हो]' जब अत्यावश्यक हो तभी किसी न्यायाधीश का स्थानान्तरण करना चाहिये।"

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि: "अनुच्छेद 222 का खंड (2) निकाल दिया जाये।"

इस खंड के अधीन उच्च न्यायालय के किसी ऐसे न्यायाधीश के लिये, जिस का एक राज्य से दूसरे राज्य को स्थानान्तरण हुआ हो, प्रतिकरात्मक भत्ता निर्धारित करने की शक्ति राष्ट्रपति को दी गई है। मेरे विचार से उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों और भत्तों के सम्बन्ध में संविधान में हम जिन उपबन्धों को रख चुके हैं उन में परिवर्तन न करना ही हमारे लिये उचित है। इस विषय के सम्बन्ध में सारे भारत में एकरूपता होनी चाहिये। सीमित रूप से ही क्यों न हो परन्तु इस से देश में एक राष्ट्र की भावना जाग्रत होगी। यदि हम किसी एक राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों और किसी अन्य राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों और भत्तों में द्वेष से विभेद करेंगे तो इस का परिणाम बुरा ही होगा। कम से कम मैं इसे न तो पसंद करूंगा और न प्रोत्साहित करूंगा। संविधान में अथवा संसद द्वारा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये जो वेतन और भत्ते निर्धारित किये गये हों वे मद्रास अथवा बम्बई अथवा संयुक्त प्रान्त के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को समान रूप से मिलने चाहियें। मेरे विचार से जब उन के लिये अनुसूची में चार अंकों वाला वेतन निर्धारित किया गया है तो उन्हें प्रतिकरात्मक भत्ता देने की कोई आवश्यकता नहीं है। मेरी समझ में नहीं आता कि जब उन्हें

[श्री एच.वी. कामत]

3000 रुपए अथवा 4000 रुपए का वेतन मिलेगा तो स्थानान्तरित होने पर उन्हें प्रतिकरात्मक भत्ता क्यों दिया जाये। अपने न्यायाधीशों तथा लोक-सेवकों से हम यही आशा करेंगे कि वे देश भक्त होंगे और जब सार्वजनिक हित की दृष्टि से वे एक राज्य से दूसरे राज्य को स्थानान्तरित किये जायेंगे तो वे भत्तों की मांग नहीं करेंगे। उन्हें जो वेतन और भत्ते दिये जाते हैं वे पर्याप्त होने चाहियें। मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जाये।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** इस उपखंड को निकालने के सम्बन्ध में मेरे मित्र श्री कामत ने जो तर्क उपस्थित किये हैं उन का मैं एक अन्य कारण से समर्थन करता हूं। हम यह चाहते हैं कि न्यायाधीशों के हितों की रक्षा हो किन्तु इस सम्बन्ध में व्यवस्था करने में हम बहुत आगे बढ़ रहे हैं। उन की छुट्टी भत्तों, निवृत्ति-वेतनों आदि के सम्बन्ध में हम विस्तृत उपबन्ध रख चुके हैं। इतना अधिक विवरण देकर हमें अपने संविधान को बोझल नहीं बनाना चाहिये। यदि न्यायाधीशों को अधिक भत्ते देने की आवश्यकता पड़ेगी तो मैं समझता हूं कि राष्ट्रपति अथवा संसद उसे प्रदान करने के किसी संविधानिक कठिनाई का अनुभव नहीं करेगी। मेरे विचार से यह उपबन्ध बिलकुल अनावश्यक है और उसे निकाल देना चाहिये।

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** श्रीमान्, अनुच्छेद 224 के सम्बन्ध में मैं अपना संशोधन संख्या 355 नहीं उपस्थित कर रहा हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं संशोधन संख्या 356 के समान ही एक संशोधन को उपस्थित कर चुका हूं। इसलिये मैं संशोधन संख्या 356 नहीं उपस्थित कर रहा हूं।

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** मैं संशोधन संख्या 377 नहीं उपस्थित कर रहा हूं। मैं अनुच्छेद 302 के सम्बन्ध में संशोधन संख्या 383 को उपस्थित करना चाहता हूं।

मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 302 में 'as may be required in the public interest [जैसे कि लोक-हित में अपेक्षित हों]' शब्दों के स्थान पर 'as may be required in the general public interest [जैसे कि जनसाधारण के हित में अपेक्षित हों]' शब्द रखे जायें।"

अथवा, विकल्पत:

"अनुच्छेद 302 में 'may by law [विधि द्वारा]' शब्दों के पश्चात् 'enacted by virtue of power conferred by the Constitution [जो संविधान द्वारा प्रदत्त शक्ति के अधीन बनाई गई हो]' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

यदि आप कृपा कर के अनुच्छेद 302 को देखें तो आप को ज्ञात होगा कि 'संसद विधि द्वारा' शब्दों के पश्चात कुछ बिन्दु हैं और दूसरे पठन के अवसर पर इन के स्थान पर ये शब्द थे:

"जो संविधान द्वारा प्रदत्त शक्ति के अधीन बनाई गई हो।"

यह अनुच्छेद 302 तथा अनुच्छेद 301, 303 आदि भारत राज्य-क्षेत्र के भीतर व्यापार, वाणिज्य और समागम के सम्बन्ध में हैं। वास्तव में आरम्भ में मूलाधिकारों में एक धारा इस आशय की थी कि सारे भारत में व्यापार, वाणिज्य और समागम अबाध रूप से किया जा सकेगा, वह अनुच्छेद निकाल दिया गया है और कुछ अन्य उपबन्ध रख दिये गये हैं। यह अनुच्छेद 303 आदि प्रारम्भिक उपबन्धों में भी थे किन्तु हम ने यह विचार किया था कि वे अनुच्छेद 16 के अधीन हैं। अब दिखाई यह देता है कि अनुच्छेद 302 के द्वारा व्यापार आदि की स्वतंत्रता पर निर्बन्धन लगाने की शक्ति संसद को दी जा रही है। यदि आप कृपा कर के अनुच्छेद 19 (छ) पर दृष्टि डालें जिस पर हम विचार कर चुके हैं तो आप देखेंगे कि वह इस प्रकार है—

"सब नागरिकों को कोई वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारबार करने का अधिकार होगा।"

जो निर्बन्धन लगाये गये हैं वे खंड (6) में वर्णित हैं। उस में कहा गया है—

"उक्त खंड के उपखंड (6) की कोई बात उक्त खंड द्वारा दिये गये अधिकार के प्रयोग पर साधारण जनता के हितों में युक्ति युक्त निर्बन्धन जहां तक कोई वर्तमान विधि लगाती हो वहां तक उस के प्रवर्तन पर प्रभाव, अथवा वैसे निर्बन्धन लगाने वाली कोई विधि बनाने में राज्य के लिये रुकावट न डालेगी....."

मेरा निवेदन है कि भारत के निवासियों को जो न्यूनतम तथा आधारभूत अधिकार प्राप्त हैं वे मूलाधिकार ही हैं। भारत के प्रत्येक निवासी को इस देश का नागरिक होने के नाते भारत के किसी भी भाग में व्यापार करने का अधिकार है। इस पर केवल वही निर्बन्धन लगाये गये हैं जो खंड (6) में वर्णित हैं। अनुच्छेद 302 के अधीन भी लोक-हित में अपेक्षित होने पर न कि सार्वजनिक हित में अपेक्षित होने पर, संसद निर्बन्धन आरोपित कर सकती है। इन दो पदावलियों में यह अन्तर है। अनुच्छेद 19 में जिन अधिकारों को स्पष्ट शब्दों में मूलाधिकारों के रूप में प्रदान किया गया है उन्हें अनुच्छेद 302 में "लोक-हित में'' शब्द रख कर अपहृत किया जा रहा है। मैं यह बता कर कि इन पदावलियों में क्या अन्तर है सभा का समय नष्ट नहीं करना चाहता। "लोक-हित'' शब्द प्रयुक्त हैं न कि "जनसाधारण के हित"। "लोक-हित" राज्य के लोगों के वर्गीय हित हो सकते हैं किन्तु जनसाधारण के हित का अभिप्राय होगा भारतीय जन-साधारण के हित।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** यह संशोधन मसौदा-समिति के उपस्थित किये हुए किसी संशोधन से उत्पन्न नहीं होता और इसलिये यह अनियमित है।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से आप ठीक कहते हैं।

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** इस सम्बन्ध में निर्णय करने के पूर्व मेरी बात कृपा कर के सुन ली जाये।

संशोधन संख्या 383 में दो संशोधन सन्निहित हैं—एक यह है कि ''जो संविधान द्वारा प्रदत्त शक्ति के अधीन बनाई गई हो'' शब्द प्रविष्ट किये जायें और दूसरा यह है कि "जनसाधारण के हित में" शब्द रखे जायें। वास्तव में इन दोनों संशोधनों का उद्देश्य एक ही है। इन दो संशोधनों में कुछ भी अन्तर नहीं है। यदि ये शब्द रखे गये तो यह अनुच्छेद उन्नीसवें अनुच्छेद के अधीन हो जायेगा। इसलिये मेरा निवेदन है कि या तो "जो संविधान द्वारा प्रदत्त शक्ति के अधीन बनाई गई हो" शब्द पूर्ववत् रखे जायें या "जनसाधारण के हित में" शब्द रखे जायें। मेरे विचार से जब हम अनुच्छेद 19 को पारित कर चुके हैं तो हम किसी ऐसे अनुच्छेद को पारित नहीं कर सकते जिस से उस का शून्यन होता हो। इन दोनों में असंगति है और मसौदा-समिति तथा सभा से मेरा निवेदन है कि वे इस असंगति पर विचार करें और इसे दूर कर दें।

***अध्यक्षः** आप का तर्क यह है कि "साधारण" शब्द का आशय वही है जो निकाले गये शब्दों का है। इसलिये या तो "साधारण" शब्द जोड़ा जाये या निकाले गये शब्द फिर रखे जायें।

संशोधन संख्या 384

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 309 के परन्तुक में से 'or such person as he may direct [अथवा ऐसे व्यक्ति को जिसे वह निदेशित करें]' शब्द निकाल दिये जायें।"

मैं सभा का ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूं कि अनुच्छेद 309 के परन्तुक द्वारा संघ की सेवाओं के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को और राज्यों की सेवाओं के सम्बन्ध में राज्यपाल अथवा राजप्रमुख को भर्ती करने तथा उन में नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों के सम्बन्ध में उस समय तक नियम बनाने की शक्ति दी गई है जब तक कि यथास्थिति संसद अथवा राज्य का विधान-मंडल इस सम्बन्ध में उपबन्ध न बना ले। मैं देखता हूं कि मसौदा समिति ने जिस संशोधन की सिफारिश की है उस में कुछ भी सार नहीं है। संशोधन का आशय यह है कि इस सम्बन्ध में केवल राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल अथवा राजप्रमुख की ही क्षमता प्राप्त नहीं है किन्तु ऐसे व्यक्ति को भी यह क्षमता प्राप्त

है जिसे वह निदेशित करे। मेरे विचार से इस संशोधन को उपस्थित कर के लड़कपन का ही परिचय दिया गया है। आज प्रातः जब हम ने कार्यपालिका प्राधिकार के विषय पर विचार किया तो हम ने देखा कि संघ की कार्यपालिका शक्ति को राष्ट्रपति या तो स्वयं प्रयोग कर सकता है या अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों द्वारा प्रयोग कर सकता है। इसका यह अर्थ है कि यदि उसे वह स्वयं प्रयोग नहीं करता है तो अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों द्वारा प्रयोग करवा सकता है। इस प्रसंग में भी नियम बनाने की शक्ति को या तो वह स्वयं प्रयोग कर सकता है अथवा प्राधिकार दिये हुए व्यक्तियों से प्रयोग करवा सकता है। मेरी समझ में नहीं आता कि मसौदा-समिति इस का उल्लेख क्यों करना चाहती है कि उसे या तो वह स्वयं प्रयोग कर सकता है या अपने निदेशित किये हुए किसी व्यक्ति से प्रयोग करवा सकता है। सारे संविधान में हम ने इस का स्पष्ट शब्दों में उल्लेख किया है कि राष्ट्रपति जब कभी कार्य करेगा अपने मंत्रिमंडल से मंत्रणा लेकर कार्य करेगा और अपनी इच्छा से कार्य नहीं करेगा। वह अपना प्राधिकार किसी अन्य व्यक्ति को भी दे सकता है। ये शब्द बिल्कुल अनावश्यक और सारहीन हैं। इसलिये मैंने यह सुझाव प्रस्तुत किया है कि राष्ट्रपति और राज्यपाल तथा राज्यप्रमुख के सम्बन्ध में जहां कहीं "अथवा ऐसे व्यक्ति को जिसे वह निर्देशित करे" शब्द आये हों वे निकाल दिये जायें क्योंकि इस में कुछ भी सन्देह नहीं है कि जहां कहीं राष्ट्रपति, राज्यपाल अथवा राज्यप्रमुख का उल्लेख है उस से व्यक्ति विशेष अभिप्रेत नहीं है बल्कि संघ के अथवा राज्य के कार्यपालिका प्राधिकार का प्रतीक अभिप्रेत है। इस लिये मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि वह मेरे संशोधन संख्या 384 पर गम्भीरतापूर्वक विचार करें।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री कामत ने इस सम्बन्ध में जो तर्क उपस्थित किये हैं उन से भी मैं सहमत हूं। हम या तो राष्ट्रपति को यह शक्ति दें या न दें। यदि हमारा यह विचार हो कि वह इस सम्बन्ध में अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन नही कर सकेगा और वह इस कारण कि वह बहुत विस्तृत है अथवा उस का कोई महत्व नहीं है और उस के लिये यह आवश्यक होगा कि वह अपनी शक्ति किसी अन्य व्यक्ति को प्रदान करे तो अच्छा यह होगा कि हम इस स्थल पर उस व्यक्ति का उल्लेख कर दें और राष्ट्रपति को यह शक्ति दे कर फिर उस से उसे किसी अन्य व्यक्ति को देने को न कहें। वास्तव में श्रीमान्, संविधान में सेवाओं के हितों के रक्षण को जो महत्व दिया गया है उस से मैं पूर्णतया असहमत हूं। मुझे तो इस से भारत-मंत्री के दिनों का स्मरण होता है जब वह संसार के किसी भी भाग में सेवाओं में प्रसंविदा द्वारा नियुक्त सभी-व्यक्तियों का पिता था। मेरे विचार से यह इस विचार-धारा का भी द्योतक है कि देश में सेवाओं में नियुक्त व्यक्तियों का इतना अधिक महत्व है कि राष्ट्रपति के अतिरिक्त अन्य कोई व्यक्ति उन की सेवा की शर्तों आदि के सम्बन्ध में हस्तक्षेप नहीं करेगा। श्रीमान,

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

यद्यपि मैं यह चाहता हूं कि यह शक्ति किसी अन्य व्यक्ति को दी जाये किन्तु अच्छा यह होगा कि या तो यह शक्ति राष्ट्रपति को ही दी जाये अथवा यह शक्ति संघ की या राज्य की सरकार को दी जाये और राष्ट्रपति का कोई उल्लेख ही नहीं किया जाये। किन्तु यदि हम अपने संविधान में राष्ट्रपति को बहुत कुछ पहले के भारत-मंत्री के समान बनाना चाहते हैं तो केवल राष्ट्रपति का उल्लेख किया जाये और यह न कहा जाये कि वह किसी अन्य व्यक्ति को शक्ति सौंप सकेगा। वास्तव में राष्ट्रपति से यह अभिप्रेत नहीं है कि प्रत्येक मामले में वह स्वयं कार्य करेगा। अधिकांश मामलों में वह किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा कार्य करेगा। अधिसूचनाओं में लिखा जायेगा कि "राष्ट्रपति ने कृपा कर के यह आदेश दिया है, इत्यादि" किन्तु सम्भवत: एक स्टैनोग्राफर, जो स्नातक भी न होगा, राष्ट्रपति के नाम से उस अधिसूचना का मसौदा तैयार करेगा। *(हास्य)*।

(संशोधन संख्या 387 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री एच.वी. कामत:** मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 311 के खंड (3) में 'reasonably practicable to give to any person an opportunity [किसी व्यक्ति को कारण दिखाने का अवसर देना युक्तियुक्त रूप में व्यवहार्य है या नहीं]' शब्दों के स्थान पर 'practicable to give any person a reasonable opportunity [किसी व्यक्ति को कारण दिखाने का युक्तियुक्त अवसर देना व्यवहार्य हैं या नहीं]' शब्द रखे जायें।"

यदि मेरे माननीय सहकारी थोड़ी देर के लिये इस अनुच्छेद के खंड (2) की ओर ध्यान दें तो वे देखेंगे कि उसमें "युक्तियुक्त अवसर उसे न दिया गया हो, इत्यादि" शब्द प्रयुक्त हैं, अर्थात् जब तक किसी व्यक्ति को कारण दिखाने का युक्तियुक्त अवसर न दिया गया हो तब तक उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती है किन्तु खण्ड (3) में थोड़ा सा परिवर्तन कर दिया गया है और "युक्तियुक्त अवसर" शब्दों को प्रयोग न करके "युक्तियुक्त रूप में व्यवहार्य है" शब्द प्रयोग किये गये हैं। मेरे विचार से इस परिवर्तन के कारण इस खण्ड का अर्थ बहुत बदल जायेगा। यदि सभा मेरे संशोधन की स्वीकार करेगी तो जो अवसर दिया जायेगा वह युक्तियुक्त अवसर होगा। मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव पहले के अनुच्छेद 13 के सम्बन्ध में ''युक्तियुक्त" शब्द पर बहुत जोर दिया था और मुझे आशा है कि इस प्रसंग में भी युक्तियुक्त शब्द रखने के सम्बन्ध में वे मुझ से सहमत होंगे क्योंकि जब कभी कार्यवाही करने वाला व्यक्ति सम्बन्धित पदाधिकारी को अवसर नहीं देना चाहेगा तो वह यही कहेगा कि यह युक्तियुक्त रूप में व्यवहार्य नहीं था। ''व्यवहार्य" का अर्थ है पूर्णतया व्यवहार्य। मुझे विश्वास है कि जब विचार-विमर्श करते समय डॉ. अम्बेडकर ने यह अनुच्छेद उपस्थित किया था तो उनकी दृष्टि में यही अर्थ था। इसका यह अर्थ है कि किसी पदाधिकारी

को उस दशा में और केवल उसी दशा में, कारण दिखाने का अवसर नहीं दिया जा सकता है जब कि उसका पता न लगे अथवा उसका पता ज्ञात न हो। अब मसौदा-समिति ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसमें कहा गया है कि-"यदि पदाधिकारी का यह विचार हो कि उस व्यक्ति को अवसर देना युक्तियुक्त रूप में व्यवहार्य नहीं है"। इसका यह अर्थ है कि सम्भव है कि व्यवहार्य हो किन्तु युक्तियुक्त रूप में व्यवहार्य न हो। अन्तर यह है कि मुझे विश्वास है कि मेरे माननीय सहकारी इसे समझेंगे। हमें निश्चित शब्दों में यह निर्धारित कर देना चाहिये कि केवल उस दशा में, जब सम्बन्धित पदाधिकारी को युक्तियुक्त अवसर देना सम्भव न हो, उससे ऊंचे पदाधिकारी का विनिश्चय अन्तिम होगा। मेरे विचार से, पिछले सत्र में इस सभा ने जो मसौदा स्वीकार किया था उसमें मसौदा-समिति ने मनमाने ढंग से परिवर्तन किये हैं और मैं समझता हूं कि हमें इस में इस प्रकार रूप भेद कर देना चाहिये कि इस खंड का आशय पूर्णतया स्पष्ट हो जाये। मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि मेरे संशोधन संख्या 388 पर विचार किया जाये।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 389 ।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 316 के खण्ड (1) के परन्तुक में 'under an Indian State [किसी देशी राज्य के अधीन]' शब्दों के स्थान पर 'in an Indian State [किसी देशी राज्य में]' शब्द रखे जायें।"

मैं यह नहीं कहता कि मुझे अंग्रेजी भाषा पर पूर्ण अधिकार है या मैं उस भाषा का विशेषज्ञ हूं। मैं इस संशोधन को केवल इसलिये उपस्थित कर रहा हूं कि मैं इसे आवश्यक समझता हूं। मुझे आशा है कि मसौदा-समिति के सदस्य, जो इस सम्बन्ध में मुझ से कहीं अधिक बुद्धिमान हैं, इस परन्तुक द्वारा तथा 'किसी देशी राज्य के अधीन पद धारण कर चुके हैं' पदावलि द्वारा जिस अर्थ को व्यक्त करना चाहते हैं उसकी ओर यथेष्ट ध्यान देंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि "सम्राट के अधीन पद धारण किया हो" पदावलि संविधानिक पदावलि है किन्तु मैंने "किसी देशी राज्य के अधीन पद धारण किया हो" पदावलि कभी नहीं सुनी। यह पदावधि या तो "किसी देश राज्य की सरकार के अधीन" होनी चाहिये या "किसी देशी राज्य में" होनी चाहिये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या मैं अपने माननीय मित्र को बता सकता हूं कि इरादा यह है कि सभा की अनुमति से इन शब्दों के स्थान पर "किसी देशी राज्य की सरकार के अधीन" शब्द रखे जायें।

***श्री एच.वी. कामत:** मुझे प्रसन्नता है कि मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने मेरे इस सुझाव को स्वीकार कर लिया है और इसलिये श्रीमान, मैं इस संशोधन पर जोर नहीं देता।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से संशोधन संख्या 392 का प्रश्न ही नहीं उठता।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या मैं माननीय सदस्य से निवेदन कर सकता हूं कि वे शुद्धिपत्र पर दृष्टि डालें और देखें कि उसमें इसे स्थान मिल गया है या नहीं। उसमें दो कामा दिये गये हैं।

***एक माननीय सदस्य:** मसौदा-समिति ने इस संशोधन को चुरा कर इसे स्थान दे दिया है।

***श्री एच.वी. कामत:** "चुरा कर" शब्द संसदोचित नहीं हो सकते हैं इसलिये यह कहा जाये कि उसने इस संशोधन को अपना कह कर स्थान दिया है। संशोधन सख्या 392 भी विराम चिह्नों के ही सम्बन्ध में है। चूंकि मसौदा-समिति को विराम चिह्नों का यथेष्ट ज्ञान है इसलिये मैं इसे उसी के निर्णय के लिये छोड़ देता हूं। श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "अनुच्छेद 319 के खंड (ग) में 'other than a Joint Commission [संयुक्त आयोग के अतिरिक्त]' शब्दों के स्थान पर 'or as the Chairman of a Joint Commission [अथवा संयुक्त आयोग के सभापति के रूप में]' शब्द रखे जायें।"

यह अनुच्छेद आयोग के सदस्यों द्वारा ऐसे सदस्य न रहने पर, अर्थात आयोग के सदस्य न रहने पर, पदों के धारण के सम्बन्ध में प्रतिषेध के सम्बन्ध में है। जब लोक सेवा आयोग के कोई सदस्य आयोग के सदस्य अथवा सभापति न रहें तो ऐसी दशा में इस अनुच्छेद में इनके सम्बन्ध में कुछ निर्बन्धन रखे गये हैं। इस अनुच्छेद के खंड (ग) में संघ-लोकसेवा-आयोग के सभापति के अतिरिक्त अन्य सदस्यों के लिये निर्बन्धन रखे गये हैं। उसमें कहा गया है "ऐसा सदस्य पद रिक्त करने पर संयुक्त आयोग के अतिरिक्त किसी राज्य-लोकसेवा-आयोग का सभापति नियुक्ति होने का पात्र होगा।" मेरी समझ में नहीं आता कि संयुक्त-आयोग के सम्बन्ध में यह प्रतिषेध क्यों रखा गया है। उस व्यक्ति ने संघ-आयोग के सदस्य का पद रिक्त कर दिया होगा। मेरे विचार से तर्कयुक्त यही है कि जैसे राज्य आयोग के सम्बन्ध में कोई प्रतिषेध नहीं है वैसे ही संयुक्त-आयोग का सदस्य होने के लिये भी कोई प्रतिषेध नहीं होना चाहिये। प्रतिषेध केवल संघ-लोकसेवा-आयोग का सदस्य अथवा सभापति रहने के सम्बन्ध में होना चाहिये। किन्तु न तो राज्य-आयोग के सम्बन्ध में और न संयुक्त आयोग के सम्बन्ध में कोई प्रतिषेध होना चाहिये। इस कारण मैं संशोधन संख्या 393 को उपस्थित कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 320 को उठायेंगे।

***श्री एच.वी. कामत:** टी.टी. कृष्णमाचारी कहते हैं कि मसौदा-समिति ने यह संशोधन स्वीकार कर लिया है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यदि मेरे माननीय मित्र संशोधन संख्या 394 और 395 के प्रथम विकल्प को (क्योंकि उसे केवल दोहराया ही गया है) उपस्थित करेंगे तो हम उनके संशोधनों को स्वीकार कर लेंगे।

***श्री एच.वी. कामत:** मुझे इसकी प्रसन्नता है। मैं संशोधन संख्या 394 तथा 395 का प्रथम विकल्प उपस्थित करता हूं।

"अनुच्छेद 320 के खंड (3) के उपखंड (घ) में 'under an Indian State [किसी देशी राज्य के अधीन]' शब्दों के स्थान पर 'under the Government of an Indian State [किसी देशी राज्य की सरकार के अधीन]' शब्द रखे जायें।"

"अनुच्छेद 320 के खंड (3) के उपखंड (ङ) में 'under an Indian State [किसी देशी राज्य के अधीन] शब्दों के स्थान पर 'under the Government of an Indian State [किसी देशी राज्य की सरकार के अधीन]' शब्द रखे जायें।"

***पंडित ठाकुरदास भार्गव:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 320 के खंड (4) में से 'the members of the Scheduled Castes or Scheduled Tribes [अनुसूचित जातियों अथवा अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्य]' शब्द निकाल दिये जायें।"

यदि आप कृपा करके अनुच्छेद 320 के खण्ड (4) पर दृष्टि डालें तो आप देखेंगे कि उसमें ये शब्द प्रयुक्त हैं:

"खंड (3) की किसी बात से यह अपेक्षा न होगी कि लोकसेवा-आयोग से उस रीति के बारे में परामर्श किया जाये जिससे संघ में, अथवा राज्यों में, अनुसूचित जातियों, अथवा अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्यों के लिये, अथवा नागरिकों के किसी पिछड़े हुए वर्ग के लिये, पद अथवा स्थान रक्षित रखे जायें।"

ये शब्द अर्थात् "अनुसूचित जातियों, अथवा अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्यों के लिये, अथवा" नवीन शब्द हैं। पहले ये शब्द नहीं रखे गये थे। अब जहां तक स्थान रक्षित करने का सम्बन्ध है हम देखते हैं कि अनुच्छेद 16 में इसका उल्लेख किया गया है जिसके खंड (1) में ये शब्द प्रयुक्त हैं ''राज्याधीन नौकरियों या पदों पर नियुक्ति के सम्बन्ध में सब नागरिकों के लिये अवसर की समता होगी।" इसके अतिरिक्त खंड (4) में कहा गया है कि "इस अनुच्छेद की किसी बात से राज्य को पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के रक्षण के लिये उपबन्ध करने में कोई बाधा नहीं होगी।'' इन दो धाराओं को पढ़ने में यह स्पष्ट हो जायेगा कि वास्तव में यह रक्षण केवल उस पिछड़े हुए नागरिक वर्ग के सम्बन्ध में है जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है। अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्यों के लिये स्थान रक्षित करने के सम्बन्ध में कोई उपबन्ध नहीं है। इस वर्ग

[पंडित ठाकुर दास भार्गव]

को विधि द्वारा जो रक्षण प्रदान किया गया है वह अनुच्छेद 335 में वर्णित है जिसमें कहा गया है कि "संघ या राज्य के कार्यों से संसक्त सेवाओं और पदों के लिये नियुक्तियां करने में प्रशासन कार्यपटुता बनाये रखने की संगति के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्यों के दावों का ध्यान रखा जायेगा।" इसलिये कम से कम इतना तो स्पष्ट है ही कि अनुसूचित जातियों अथवा अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्यों के लिये स्थान रक्षित करने का कोई इरादा नहीं था। मुझे स्मरण है कि अल्पसंख्यक समिति की उपसमिति के सामने यह मामला आया था और उस समय हमने यह निर्णय किया था कि स्थान रक्षित न रखे जायें। अब चुपचाप छिपाकर अनुच्छेद 320 के खंड (4) में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के लिये स्थान रक्षित करने के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे जा रहे हैं। मेरा निवेदन है कि जब संविधान में लोकसेवा-आयोग के सदस्यों को स्पष्ट शब्दों में यह समादेश दिया गया है कि नियुक्तियां करने में प्रशासन कार्यपटुता बनाये रखने की संगति के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्यों के दावों का ध्यान रखा जाये, जिसका कि उसे पालन करना ही होगा, तो यह उपबन्ध निरर्थक सिद्ध होगा और वास्तव में इससे एक प्रकार से अनुच्छेद 335 का प्रभाव कम हो जायेगा। मैं यह चाहता हूं कि जहां तक अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों का सम्बन्ध है, सभी नियुक्तियों के सम्बन्ध में न कि केवल रक्षित स्थानों के सम्बन्ध में उनके दावों का ध्यान रखा जाये। यदि स्थान रक्षित किये गये तो उनके लिये अन्य लोगों के दावों पर विचार नहीं किया जायेगा और केवल उन्हीं के दावों का ध्यान रखा जायेगा। इससे यह होगा कि केवल रक्षित स्थानों के सम्बन्ध में उनके दावों पर विचार किया जायेगा और अन्य स्थानों के सम्बन्ध में उनके दावों का ध्यान नहीं रखा जायेगा।

सभा को यह विदित है कि अनुच्छेद 16 के खंड (4) में जो उपबन्ध हैं वे निराकरण मूलक उपबन्ध हैं और इस कारण रखे गये हैं कि अवसर समता से सभी नागरिक समान रूप से लाभ उठा सकें क्योंकि उनमें से कुछ का बहुत विकास हुआ है और कुछ का बिलकुल भी नहीं हुआ है। उपबन्ध यह रखा गया है कि नियुक्तियों या पदों के रक्षण के लिये उपबन्ध करने में राज्य के लिये कोई बाधा नहीं होगी। मैं कह नहीं सकता कि राज्य पदों को उन के लिये रक्षित रखेगा या नहीं। यदि पद रक्षित नहीं किये गये तो इस उपबन्ध से न तो पिछड़े हुए वर्गों को और न किसी अन्य वर्ग को लाभ होगा। जब इस सभा ने यह निर्णय नहीं किया है कि पद रक्षित किये जायेंगे तो हम इस खंड (4) में किसी ऐसी स्थिति के लिये व्यवस्था नहीं कर सकते हैं जिस में पदों के रक्षित करने की आवश्यकता पड़े। सभा ने अन्तिम रूप से यह निर्णय किया है कि पदों को रक्षित नहीं किया जायेगा किन्तु इन शब्दों से यह भ्रम उत्पन्न हो जाता है कि पदों को रक्षित किया जा सकता है।

मैं यह चाहता हूं कि संविधान द्वारा जो अधिकार प्रदान किये गये हैं उन का अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों के लोग भी पूर्ण रूप से उपभोग करें और उन्हें न तो उन से अधिक अधिकार प्राप्त हो न उन से कम। अनुच्छेद 335 के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि वह एक सार्थक उपबन्ध है और उस का पर्याप्त विस्तार है। यदि मैं लोक सेवा-आयोग का सदस्य होता तो मैं प्रशासन कार्यपटुता बनाये रखने की संगति के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों के सदस्यों को आने वाले पांच या दस वर्षों तक प्रत्येक स्थान देना चाहता ताकि वे.....

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या माननीय सदस्य महोदय बतायेंगे कि आखिर अनुच्छेद 335 को किस प्रकार प्रवर्तन में लाया जाये?

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** क्या उसे केवल स्थानों के रक्षण से ही प्रवर्तन में लाया जा सकता है? यदि यही बात है तो इस सम्बन्ध में सभा ने निर्णय क्यों नहीं किया? हम ने इस के विरुद्ध निर्णय किया और हम इस के विरुद्ध रहे हैं। मसौदा-समिति छिपा कर एक ऐसे उपबन्ध को प्रविष्ट करना चाहती है जिस से सभा के निर्णय का खंडन होता है। आखिर यह प्रश्न पहले क्यों नहीं उठाया गया? मेरे विचार से स्थान रक्षण की व्यवस्था एक गलत व्यवस्था है। अनुच्छेद 335 के अधीन उन के दावों पर अवश्य ही विचार किया जायेगा। आखिर एक आयोग नियुक्त किया जायेगा और कल्याण सम्बन्धी अधिकारी भी नियुक्त किये जायेंगे। राष्ट्रपति यह देखता रहेगा कि इन समुदायों के अधिकारों की रक्षा हो रही है या नहीं। मेरे विचार से कोई कारण नहीं है कि अनुच्छेद 335 प्रवर्तन में नहीं लाया जाये। उसे प्रवर्तन में लाना चाहिये किन्तु यह उसे प्रवर्तन में लाने का कोई ढंग नहीं है।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले:** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे विचार से यह एक दुर्भाग्य की बात है कि इस सभा ने जो थोड़ी सी सुविधाएं प्रदान की हैं उन्हें भी इस प्रकार सीमित किया जा रहा है। मैं अपने माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव के संशोधन से सहमत नहीं हूं क्योंकि अनुच्छेद 335 को, अर्थात् पूर्व अनुच्छेद 296 को प्रवर्तन में लाने के लिए अनुच्छेद 320 के खंड (4) में उपबन्ध रखे जा रहे हैं। श्रीमान, उन्होंने पिछड़े हुए समुदायों की चर्चा की है किन्तु मैं उन्हें बताना चाहता हूं कि यह पदावलि कोई विस्तृत पदावलि नहीं है और इसे भारत की सभी प्रान्तीय सरकारों ने भी स्वीकार नहीं किया है। मद्रास में पिछड़े हुए समुदायों से लोगों के कुछ वर्ग-विशेष समझे जाते हैं और वास्तव में अनुसूचित जातियां और अनुसूचित आदिम जातियां पिछड़े हुए समुदायों से भिन्न हैं। यदि मेरे विद्धान मित्र का उद्देश्य यह है कि संविधान में स्थानों के रक्षण के सम्बन्ध में केवल पिछड़े हुए समुदायों का ही उल्लेख रहे तो अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के लोगों के लिये न तो मद्रास में और न कुछ अन्य प्रान्तों में स्थानों का रक्षण रहेगा। इस लिये मेरी यह धारणा है कि अनुच्छेद 335 के आशय को स्पष्ट करने के लिये तथा उसे प्रवर्तन में लाने के लिये अनुच्छेद

[श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

320 के खंड (4) में जो उपबन्ध रखे गये हैं वे उपयुक्त उपबन्ध हैं। मेरे मित्र कहते थे कि रक्षण के लिये कोई व्यवस्था नहीं की गई है किन्तु यदि वे अनुच्छेद 335 का अध्ययन करें तो वे देखेंगे कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों के लोगों के लिये सेवाओं में स्थानों के रक्षण की व्यवस्था की गई है। खंड (4) द्वारा लोकसेवा-आयोग से परामर्श करने की शक्ति दी गई है। लोक सेवा-आयोग ही अन्तिम रूप से राज्यपालों को तथा संघ के राष्ट्रपति को इस सम्बन्ध में मंत्रणा देगा कि अनुसूचित जातियों तथा आदिम-जातियों के लोगों को किस आधार पर नियुक्त किया जाये। इसलिये मेरी यह प्रबल धारणा है कि यदि मेरे माननीय मित्र का संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो उस का अर्थ यह होगा कि अनुसूचित जातियों तथा आदिम-जातियों के लोगों के लिये सेवाओं में स्थान रक्षित नहीं किये जायेंगे। इस कारण मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान, मेरा यह प्रस्ताव है कि इस अनुच्छेद को स्थगित रखा जाये। यह एक बहुत ही विवादग्रस्त अनुच्छेद है।

***अध्यक्ष:** मैं अब इस पर बहस करने की आज्ञा देता हूं। जो लोग बोलना चाहते हैं वे बोल सकते हैं। इस में कोई सन्देह नहीं है कि मत अन्त में लिया जायेगा।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** मुझे इस की प्रसन्नता है कि बहुत से माननीय सदस्य इस का अनुभव कर रहे हैं कि यह एक महत्वपूर्ण अनुच्छेद है। इस में कोई सन्देह नहीं कि यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अनुच्छेद है। मसौदा-समिति ने इस अनुच्छेद में जो परिवर्तन किये हैं उन का मैं विरोध नहीं करता और मैं इस सभा के सदस्यों तथा अनुसूचित जातियों और आदिम-जातियों के प्रतिनिधियों से अपील करता हूं कि वे भी अनुच्छेद 335 में ''पिछड़े हुए वर्ग'' शब्दों के प्रविष्ट किये जाने का विरोध न करें। यह बहुत ही अनुचित हुआ कि उस अनुच्छेद से यह पदावलि निकाल दी गई। इस से किसी व्यक्ति को कोई लाभ नहीं हुआ और विशेषकर अनुसूचित जातियों तथा आदिम-जातियों के लोगों को तो कुछ भी लाभ नहीं हुआ। जिस प्रकार हम अनुच्छेद 320 में ''अनुसूचित जातियों तथा आदिम-जातियों के सदस्य'' शब्द जोड़ना चाहते हैं और ''नागरिकों के पिछड़े हुए वर्ग'' शब्द रहने देना चाहते हैं उसी प्रकार अनुच्छेद 335 में भी ''पिछड़े हुए वर्ग'' शब्द जोड़ दिये जाने चाहिये। यह सर्वथा समुपयुक्त तथा सुसंगत होगा। यदि इस सुझाव को स्वीकार कर लिया गया तो अभी जो संशोधन उपस्थित किया गया है उस का मैं बहुत विरोध करूंगा। यदि अनुसूचित जातियों के लोगों को कुछ अधिक आश्वासन देने के लिये भी रक्षणों का स्पष्ट शब्दों में उल्लेख करने की आवश्यकता हो तो हमें उन का उल्लेख करने में किसी प्रकार का संकोच नहीं होना चाहिये। हम लोगों से अपने उदार उद्देश्यों पर विश्वास रखने के लिये बहुत कुछ कहते हैं। उचित यह होगा कि हम अपने उद्देश्यों को व्यावहारिक राजनीति में चरितार्थ करें

और उन्हें ऐसे शब्दों में स्पष्ट रूप में व्यक्त करें जिन्हें साधारण नागरिक समझ सकें। यदि इस उद्देश्य से मसौदा-समिति ने अनुच्छेद 320 में समुदायों के दो वर्गों का उल्लेख करने का सुझाव रखा है तो मुझे उस के सुझाव पर कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु साथ ही मैं सभा से, तथा प्रत्येक व्यक्ति से, अपील करता हूं कि अनुच्छेद 335 में "पिछड़े हुई वर्ग" शब्द भी रखे जायें। इस अनुच्छेद का यह छोटा सा इतिहास है और मुझे विश्वास है कि जिस प्रकार इस संविधान के अन्य उपबन्धों के सम्बन्ध में अकस्मात् कई बातें हो गईं उसी प्रकार ये शब्द भी छूट गये हैं। अनुच्छेद 335 में "पिछड़े हुए वर्ग" पदावलि का इसी प्रकार उल्लेख नहीं हुआ था। उद्देश्य यह नहीं था कि उन का उल्लेख नहीं किया जाये। श्री मुंशी ने प्रस्तावित अनुच्छेद के सम्बन्ध में कई बार संशोधन उपस्थित किये किन्तु किसी भी संशोधन में यह सुझाव नहीं रखा गया कि "पिछड़े हुए वर्ग" शब्द निकाल दिये जायें। बहुत बाद में जब दुर्भाग्य से मैं दिल्ली से बाहर गया हुआ था, मैंने एकाएक देखा कि ये शब्द निकाल दिये गये हैं। प्रत्येक व्यक्ति यही समझता है कि इस प्रश्न का सर्वोत्तम हल यही है कि अनुच्छेद 320 में जिन शब्दों को जोड़ने का प्रस्ताव रखा गया है उन्हें स्वीकार किया जाये और इस सभा के माननीय सदस्य इस पर जोर दें कि अनुच्छेद 335 में 'पिछड़े हुए वर्ग' शब्द पूर्ववत् रहें। ये शब्द जान बूझ कर रखे गये थे और प्रत्येक व्यक्ति की, तथा विशेषत: पिछड़े हुए वर्गों के प्रतिनिधियों की, और मैं कहूंगा कि अनुसूचित जातियों और आदिम-जातियों के प्रतिनिधियों की भी वास्तव में यही मांग थी। विभिन्न समुदायों के हितों में कभी भी विरोध नहीं रहा है और मुझे आशा है कि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के लोग इस विरोध का सूत्रपात नहीं करेंगे क्योंकि इस का दुष्परिणाम सारे राष्ट्र को भोगना पड़ेगा। इस लिये मैं अपील करता हूं कि अनुच्छेद 320 में जो शब्द रखे गये हैं वह रहने दिये जायें और अनुच्छेद 335 में "पिछड़े हुए वर्ग" शब्द.....

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 335 के सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं है।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** मैंने इस आशय का एक संशोधन भेजा है किन्तु उसे भेजने में कुछ देर हो गई है। मैं घर से बाहर गया हुआ था और मैं उसे समय पर नहीं भेज सका किन्तु जैसे ही मुझे सूचना मिली मैंने उसे भेज दिया। मैं आप से प्रार्थना करता हूं कि मुझे इस संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा दी जाये। वह संशोधन संख्या 530 है। उस में मैंने यह कहा है कि "अनुच्छेद 335 में 'सदस्यों' शब्द के पश्चात् 'पिछड़े हुए वर्गों' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

***श्री एच.जे. खांडेकर** (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र श्री ठाकुरदास भार्गव ने जो संशोधन उपस्थित किया है उस का विरोध करने के लिये मैं अपनी जगह से उठा हूं। मसौदा-समिति ने जो मसौदा प्रस्तुत किया है वह कुछ कारणों से प्रस्तुत किया है। चूंकि इस सभा ने पिछली बार अनुच्छेद 335 को अनुच्छेद 296 के रूप में स्वीकार कर लिया था इस लिये उस अनुच्छेद

[श्री एच.जे. खांडेकर]

को प्रयोग में लाने के लिये अनुच्छेद 324 सभा के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। अनुच्छेद 335 के अनुसार अनुसूचित जातियों के लिये सेवाओं में स्थान रक्षित किये गये हैं किन्तु उस अनुच्छेद के अधीन लोकसेवा-आयोग अथवा संघ-लोकसेवा-आयोग को इस सम्बन्ध में शक्ति नहीं दी गई है। उस अनुच्छेद को प्रयोग में लाना आवश्यक है। इसी प्रयोजन से मसौदा-समिति ने इस संशोधन को उपस्थित किया है। इस के स्वीकार होने पर ही संघ-लोकसेवा-आयोग तथा राज्यों के लोकसेवा-आयोग अनुसूचित जातियों के दावों पर विचार कर सकेंगे। मैं बहुत खेद के साथ यह कहता हूं कि ऐसे संशोधन जैसे कि श्री भार्गव ने उपस्थित किये हैं, इस अवसर पर हरिजनों को दफनाने के लिये ही उपस्थित किये गये हैं। देश में सवर्ण हिन्दुओं में कुछ लोग ऐसे हैं—मैं उन की आलोचना नहीं कर रहा हूं किन्तु कुछ तथ्यों को बता रहा हूं—जो हमें कुछ भी सुविधा नहीं देना चाहते। हिन्दू समाज के कुछ लोगों को तभी संतोष होगा जब अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के लोगों को दफना दिया जायगा। श्रीमान्, मैं यह समझता हूं कि ये संशोधन इसी उद्देश्य से उपस्थित किये गये हैं। मुझे ऐसे सवर्ण हिन्दू मित्रों पर अफसोस तो है ही किन्तु साथ ही मुझे उन पर दया भी आती है। इन शब्दों के साथ मैं अपने मित्र श्री भार्गव के संशोधन का विरोध करता हूं।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, वाद-विवाद के दौरान में तथा इस संविधान पर विचार-विमर्श करते समय मेरा हमेशा यही मत रहा कि यदि किन्हीं लोगों को रक्षण अथवा विशेषाधिकारों की आवश्यकता है तो वह अनुसूचित जातियों के लोगों को ही है और जिन कारणों को मैं बराबर बताता आया हूं उन के आधार पर मैं आज भी कहता हूं कि हम ने उस वर्ग के प्रति अन्याय किया है और उस के निराकरण के लिये हम ने उसे रक्षण प्रदान किया है। इस कारण मैं इस का बराबर समर्थन करता आया हूं। मैं तथाकथित पिछड़े हुए वर्गों को रक्षण प्रदान करने के पक्ष में नहीं हूं। "पिछड़े हुए वर्ग'' पदावलि को ब्रिटिश सरकार ने प्रचलित किया था किन्तु मैं नहीं चाहता कि इसे हमारे संविधान में स्थान देकर उसे कलंकित किया जाये। पिछड़े हुए वर्ग सभी समुदायों में हैं। निर्देशक नीति तथा आधारभूत नीति का उल्लेख करते हुए हम ने यह निर्धारित किया है कि दस वर्ष के भीतर प्रत्येक व्यक्ति को साक्षर बना दिया जायेगा। साक्षर होने पर कोई व्यक्ति पिछड़ा हुआ नहीं रह जायेगा। मैं जानना चाहता हूं कि "पिछड़े हुए वर्ग" पदावलि का क्या अर्थ है।

***एक माननीय सदस्य:** उन लोगों का वर्ग जो सेवा में नहीं लगे हुए हैं।

***श्री आर.के. सिधवा:** शिक्षा से इस प्रकार की सेवाएं भी सुलभ हो जायेंगी। जब यथेष्ट शिक्षा का प्रबन्ध हो जायेगा तो सेवाओं में वे स्वत: नियुक्त होने लगेंगे। इस लिये मैं अपने मित्र डॉ. देशमुख के इस प्रस्ताव का समर्थन नहीं करता कि अनुच्छेद 313 में "पिछड़े हुए वर्ग" शब्द रखे जायें। हम ने बहुत विचार विमर्श

के पश्चात् यह निर्णय किया था कि ये शब्द नहीं रहने चाहिये। मेरा निवेदन है कि मसौदा-समिति ने जो संशोधन उपस्थित किया है वह एक उपयुक्त संशोधन है। उस में कोई संशोधन न कर के हमें उसी संशोधन का समर्थन करना चाहिये। अनुसूचित जातियों को जो शक्तियां अथवा अधिकार दिये गये हैं उन्हें मेरे विचार से इस सभा में कोई भी सदस्य समाप्त नहीं करना चाहता। मेरे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने कहा था, यद्यपि मेरे विचार से उन का यह आशय नहीं था कि ये शब्द निकाल दिये जायें। मैं इस सुझाव का विरोध करता हूं। जब हम इन्हें अपने संविधान में स्वीकार कर चुके हैं तो हम इन्हें निकालें क्यों। इसलिये मसौदा-समिति ने जो संशोधन उपस्थित किया है उस का मैं समर्थन करता हूं और उस के सम्बन्ध में किसी भी अन्य संशोधन का विरोध करता हूं। मैं नहीं चाहता कि "पिछड़े हुए वर्ग" शब्द रहें किन्तु फिर भी मैं उन्हें स्वीकार करता हूं। यदि मुझे अपनी इच्छानुसार कदम उठाने दिया जाता तो मैं इन शब्दों को नहीं रहने देता। मैं आगामी पांच वर्षों में सब लोगों को साक्षर बनाने के लिये प्रयास करता ताकि समाज में वे अपनी इच्छा के अनुसार किसी भी स्थान को प्राप्त कर सकते। पिछले 150 वर्षों में जो कुछ किया गया है उस का हमें निराकरण करना है और शीघ्रातिशीघ्र निराकरण करना है। श्रीमान, इन शब्दों के साथ मैं मसौदा-समिति के संशोधन का पूर्ण समर्थन करता हूं।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, मैं कह नहीं सकता कि इस प्रकार के विधेयकों के तृतीय पठन की प्रक्रिया का मैं ठीक निर्वाचन कर रहा हूं या नहीं किन्तु जहां तक मेरी जानकारी है मेरे प्रान्त की विधान सभा में तृतीय पठन में केवल.....

***श्री आर.के. सिधवा:** यह तृतीय पठन नहीं है।

***श्री महावीर त्यागी:** तब यह कौन सा पठन है? द्वितीय पठन समाप्त किया जा चुका है और अब इस अवसर पर केवल वे आनुषंगिक संशोधन उपस्थित किये जा सकते हैं जो पूर्व निर्णयों से उत्पन्न होते हों। किन्तु यदि इस समय ऐसे प्रश्नों को फिर छेड़ा गया जो बहुत काल तक विचार-विमर्श तथा गर्म बहस करने के पश्चात् हल किये गये हैं तो हम न तो विचार-विमर्श करने के लिये और न निर्णय करने के लिये, यथोचित समय दे सकेंगे। श्रीमान मेरा निवेदन है कि यदि वे विषय, जिन पर विचार विमर्श किया जा चुका है और जिन पर सदस्य भी दलों अथवा समूहों के रूप में परस्पर विचार-विमर्श कर चुके हैं और जिन के सम्बन्ध में समझौता कर के एक मत से निर्णय किया गया है, फिर प्रस्तुत किये गये तो श्रीमान, इस में बहुत समय लग जायेगा और आप ने कृपा करके जो समय निर्धारित किया है उस समय में आप यथोचित रूप से कार्य समाप्त नहीं कर सकेंगे। मेरा निवेदन है कि विचाराधीन संशोधन न तो आनुषंगिक संशोधन है और न इस प्रसंग में अनुसूचित जातियों के लिये पद अथवा स्थान रक्षित करने के प्रश्न को ही उठाने की आवश्यकता है। श्रीमान, पहले कई बार सभा यह मत प्रकट कर चुकी है कि हमारे देशवासियों को किन्हीं रक्षणों की आवश्यकता नहीं है।

[श्री महावीर त्यागी]

विशेषत: अनुसूचित जातियों के सम्बन्ध में सभा ने एक गरम बहस के पश्चात् सभी की सहमति से वर्तमान अनुच्छेद 335 पारित किया था जिस में कहा गया है कि "संघ या राज्य के कार्यों से संसक्त सेवाओं और पदों के लिये नियुक्तियां करने में प्रशासन कार्यपटुता बनाये रखने की संगति के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्यों के दावों का ध्यान रखा जायेगा।" यह पर्याप्त समझा गया और यह आखिरी बात थी जिस के लिये सभा एकमत से सहमत हो गई। अनुसूचित जातियों के सभी सदस्यों को भी इस अनुच्छेद से संतोष हो गया। इस सांप्रदायिकता को आप एक अन्य अनुच्छेद में भी क्यों स्थान दे रहे हैं? क्या इस के लिये एक अनुच्छेद पर्याप्त नहीं है? उसे इस स्थल पर फिर स्थान देने का अर्थ यह है कि पुराना विवाद फिर छेड़ा जा रहा है। मेरे विचार से यह कहना कि अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व यह होगा उसे इस प्रणाली से प्रदान किया जायेगा, सेवाओं में तथा पदों में अनुसूचित जातियों को प्रतिनिधित्व प्रदान करने के सम्बन्ध में जो नियम बनाये जायेंगे वे लोकसेवा आयोग से परामर्श करके नहीं बनाये जायेंगे इत्यादि बिल्कुल आवश्यक तो है ही और साथ ही इस से अनुसूचित जातियों के लोगों को भी कोई लाभ नहीं होता। अनुच्छेद 335 का विषय भी एक विवाद-ग्रस्त विषय था और उस का विरोध किया गया था। हम में से कुछ लोगों की यह धारणा थी कि विशेष रक्षणों की व्यवस्था उन लोगों पर जबरदस्ती थोपी जा रही है। किन्तु उस समय हम से यह कहा गया कि यह एक निदेशक अनुच्छेद है और इस में इस का निदेशन किया गया है कि भावी सरकारों की नीति क्या होगी। सभा उसे केवल निदेशक अनुच्छेद के रूप में स्वीकार करने के लिये सहमत हुई थी। अब आप इसे एक अन्य अनुच्छेद में भी स्थान देने जा रहे हैं। संविधान आप के हाथों में है और आप किसी भी अनुच्छेद में विवादग्रस्त विषयों को स्थान दे सकते हैं। इस सभा में उसे आधारभूत प्रस्ताव समझा जायेगा और उस पर बहस होगी तथा उस के सम्बन्ध में संशोधन भी उपस्थित किये जायेंगे। श्रीमान मेरा निवेदन है कि आप कृपा करके ऐसे प्रश्नों को अनियमित घोषित कर दें। जिन विषयों पर दो तीन बार बहस हो गई हो उन्हें सभा में फिर प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। सभा इन विषयों पर कब तक विचार-विमर्श करती रहे?

***श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महादय, मैं मसौदा समिति को बधाई देने के लिये आगे बढ़ा हूं क्योंकि यदि वह अनुच्छेद 320 के खंड (4) के सम्बन्ध में इस संशोधन को उपस्थित नहीं करती तो उस का आशय पहले की अपेक्षा अधिक स्पष्ट नहीं होता। मैं यह कहूंगा कि मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने सभा के समक्ष जो संशोधन उपस्थित किया है उसे देख कर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ है। मेरी स्मरण शक्ति बहुत दुर्बल नहीं है। कुछ ही महीने पूर्व उन्होंने स्वयं अपने को तथा सभा को इस के लिये बधाई दी कि शताब्दियों से जो कार्य नहीं हो पाया था वह आज सम्पन्न कर दिया गया है। किन्तु अब

वह अपने ही शब्दों की उपेक्षा करके मसौदा-समिति, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों और पिछड़े हुए वर्गों पर यह आरोप लगाने का प्रयास करते हैं कि उन्होंने अपना एक साम्प्रदायिक समूह बनाया है। मुझ से पूर्व बोलने वाले वक्ता महोदय ने अभी इस ओर संकेत किया था। श्रीमान, हम इस की मांग साम्प्रदायिक दृष्टि से नहीं कर रहे हैं। हम कोई भी चीज नहीं चाहते हैं। यदि आप इसे नहीं देना चाहते तो न दीजिये। हम उस की मांग नहीं कर रहे हैं। आप दाहिने हाथ से दे कर बायें हाथ से छीन न लीजिये। मैं हर बार यह कहता रहा हूं कि यह मेरा सौभाग्य है कि मैं देश के सब से पिछड़े हुए वर्ग का प्रतिनिधि हो कर, तथा उन की ओर से तर्क उपस्थित करने के लिये इस सभा में उपस्थित हुआ हूं और मैं हमेशा यह भी कहता रहा हूं कि मैं यहां भिखारियों के समान हाथ फैलाने के लिये नहीं आया हूं। यदि आप कोई अधिकार प्रदान करना चाहते हैं तो खुले दिल से प्रदान कीजिये।

जहां तक मैं समझता हूं मसौदा-समिति ने केवल यह स्पष्ट किया है कि संविधान के मूलाधिकारों तथा निदेशक तत्वों का क्या उद्देश्य है। इस के अतिरिक्त उन्होंने और कुछ नहीं किया है। मेरे मित्र इसे सब से पहले स्वीकार करेंगे कि अनुसूचित जातियां तथा अनुसूचित आदिम जातियां पिछड़े हुए वर्ग हैं। पहले जब विचार-विमर्श हुआ था उस समय तथा अपने पहले के भाषणों में वे स्वीकार कर चुके हैं कि पिछड़े हुए वर्गों को सामान्य स्तर पर लाने की आवश्यकता है। जब तक आप अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये कोई साधन नहीं अपनायेंगे तब तक आप यह कैसे करेंगे? हम भाषण अनेक सुन चुके हैं और शताब्दियों से सुनते आये हैं। इस संविधान में हम इस सम्बन्ध में उपबन्ध रख रहे हैं कि इन उद्देश्यों को किस प्रकार पूरा किया जायेगा। आप ने हम से अपील की है कि हम लंबे भाषण न दें। मैं कोई लम्बा भाषण नहीं देना चाहता और केवल यह कहना चाहता हूं कि उदारता दिखाइये और वास्तविक अर्थ में उदारता दिखाइये।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मेरे विचार से इस खण्ड के विस्तार को लगभग प्रत्येक वक्ता ने बढ़ा कर बताया है। इस में किसी ऐसे रक्षण अथवा विशेषाधिकार का उल्लेख नहीं है जो संविधान के अन्य अनुच्छेदों द्वारा प्रदान न किया गया हो। इस के द्वारा केवल इस सम्बन्ध में निर्णय करने का प्रयास किया गया है कि यदि अनुच्छेद 335 के अधीन पिछड़े हुए वर्गों अथवा अनुसूचित जातियों के लोगों के लिये स्थानों के रक्षण की आवश्यकता हुई तो क्या इस सम्बन्ध में लोकसेवा-आयोगों का भी कुछ हाथ रहेगा। यह कोई नहीं कहेगा कि अनुसूचित जातियों के लोगों के दावों के सम्बन्ध में अनुच्छेद 335 को प्रयोग में लाते हुए स्थान रक्षित नहीं किये जायेंगे। यदि कोई व्यक्ति यह कहे कि कोई स्थान रक्षित नहीं किये जायेंगे तो, मेरे विचार से अनुच्छेद 335 को बिल्कुल भी प्रयोग में नहीं लाया जा सकेगा। इस में कोई संदेह नहीं कि इस सम्बन्ध में विचार किया जा सकता है, तर्क-वितर्क किया जा सकता है और स्वविवेक से निर्णय किया जा सकता है कि किसी विशेष सेवा में अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व हो या न

[माननीय श्री के. सन्तानम]

हो और यदि हो तो किस सीमा तक। किन्तु यह कहना कि किसी भी अवस्था में स्थान रक्षित नहीं किये जायेंगे, मेरे विचार से अनुच्छेद 335 की शब्दावलि तथा उस में सन्निहित भावना से बिल्कुल असंगत है।

यह मानते हुए कि कुछ अवस्थाओं में स्थानों को रक्षित करने की आवश्यकता पड़ेगी, प्रश्न यह उठता है कि क्या वे लोकसेवा-आयोग के नियमों द्वारा रक्षित किये जायेंगे अथवा सरकार द्वारा सीधे सीधे रक्षित किये जायेंगे। यह खंड केवल इस छोटे से प्रश्न के सम्बन्ध में है। हमारी यह नीति है कि लोकसेवा-आयोग को इन साम्प्रदायिक तथा अन्य बातों से मुक्त रखा जाये।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** क्या मैं जान सकता हूं कि क्या अनुच्छेद 335 के उपबन्ध लोकसेवा-आयोगों के लिये बन्धनकारी नहीं हैं? उन्हें उन पर भी विचार करना चाहिये।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** विचाराधीन प्रश्न यह है कि जो नियम बनाये जायेंगे उन्हें लोकसेवा-आयोग बनायेगा अथवा सरकार बनायेगी। हम नहीं चाहते कि लोकसेवा-आयोग का इन मामलों में कोई हाथ रहे। उस में केवल यह कहा गया है कि ''खंड (3) की किसी बात से यह अपेक्षा न होगी कि लोकसेवा-आयोग से उस रीति के बारे में परामर्श किया जाये...."

***श्री महावीर त्यागी:** इसे स्पष्ट क्यों नहीं कर दिया जाता। क्या सरकार को अनिवार्यत: लोकसेवा-आयोग से इस सम्बन्ध में परामर्श करना है कि आप अपवाद रखना चाहते हैं?

***माननीय श्री के. सन्तानम:** मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी का यह विचार बिल्कुल गलत है कि यह एक नवीन प्रविष्टि है। यह अनुच्छेद 335 का आनुषंगिक उपबन्ध है।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूं। क्या यह अनिवार्य है कि हम नियमों के सम्बन्ध में लोकसेवा-आयोग से परामर्श करें?

***माननीय श्री के. सन्तानम:** यदि सदस्य महोदय खंड (3) पढ़ें तो उन्हें ज्ञात हो जायेगा कि इन सब मामलों के सम्बन्ध में लोकसेवा-आयोगों से परामर्श करना आवश्यक है। यदि खंड (4) को नहीं रखा गया तो यह एक विवादग्रस्त विषय रहेगा कि स्थानों को रक्षित करने की रीति के सम्बन्ध में लोकसेवा-आयोग से परामर्श किया जाये या नहीं किया जाये। हम नहीं चाहते कि इस से लोकसेवा-आयोगों का कोई सम्बन्ध रहे। यदि स्थानों के रक्षण की आवश्यकता ही हो तो उन्हें केन्द्रीय अथवा स्थानीय सरकार स्वविवेक से रक्षित करे। खंड (4) को केवल इसलिये रखा जा रहा है कि लोकसेवा-आयोग विवाद में न पड़े। यदि उसे नहीं रखा गया

और किसी समय स्थानों के रक्षण की आवश्यकता हुई तो उस दशा में लोकसेवा-आयोगों से परामर्श करना होगा और लोग रक्षण की रीति अथवा विस्तार के सम्बन्ध में लोकसेवा-आयोग को दोष देंगे। लोकसेवा-आयोगों को दोषों से मुक्त रखने के लिये ही इस खंड को प्रविष्ट किया जा रहा है। रक्षण के सम्बन्ध में किसी को कोई आपत्ति क्यों न हो, उसका इस से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि कोई सरकार अनुच्छेद 335 का यह निर्वचन नहीं कर सकती है कि उसे स्थान रक्षित करने ही हैं। उच्चतम न्यायालय अथवा कोई व्यक्ति यह तर्क उपस्थित कर सकता है। मसौदा-समिति अथवा यह सभा यह नहीं कर सकती कि अनुच्छेद 335 के अधीन स्थान रक्षित नहीं किये जा सकते हैं और इस लिये लोक सेवा-आयोगों को दोषमुक्त बनाये रखने की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में यदि मसौदा-समिति इस संशोधन को उपस्थित न करती तो वह अपने कर्तव्य का पालन न करती।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू:** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, विचाराधीन प्रश्न पर उन लोगों ने विचार-विमर्श किया है जो उस संशोधन के पक्ष में हैं जिसे मसौदा-समिति ने अनुच्छेद 335 का निर्देश करते हुए अनुच्छेद 320 के खंड (4) के सम्बन्ध में उपस्थित किया है। श्रीमान, मेरा यह विचार है कि अन्य किसी अनुच्छेद का निर्देश करने के पूर्व हमें अनुच्छेद 16 के खंड (4) का निर्देश कर देना चाहिये। उस में कहा गया है:

> "इस अनुच्छेद की किसी बात से राज्य को पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग के पक्ष में, जिन का प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के रक्षण के लिये उपबन्ध करने में कोई बाधा नहीं होगी।"

इस खंड के अधीन इस की आवश्यकता नहीं है कि केन्द्रीय सरकार अथवा राज्य की सरकार पिछड़े हुए वर्गों में से किसी वर्ग के लिये अथवा सभी वर्गों के लिए स्थान रक्षित करने के सम्बन्ध में लोकसेवा-आयोगों से परामर्श करे। इस प्रकार विचाराधीन प्रश्न का स्वरूप यह हो जाता है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों को पिछड़े हुए वर्गों में सम्मिलित किया जाये या नहीं किया जाये। यह कहा जा सकता है कि चूंकि इन जातियों का संविधान के अनेक भागों में विशेष रूप से उल्लेख किया जा चुका है इस लिये इन को पिछड़े हुए वर्गों में सम्मिलित न किया जाये। इस प्रकार के निर्वचन को स्वीकार करना कम से कम मेरे लिये बहुत कठिन होगा। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों का कई स्थलों पर इस कारण उल्लेख किया गया है कि वे प्रान्तीय सरकारों ने जिन वर्गों को पिछड़े हुए वर्ग कहा है उन से भी अधिक पिछड़ी हुई हैं। मुझे विश्वास है कि इसी कारण कई अनुच्छेदों में उन का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। इसलिये, मेरे विचार से, यदि मसौदा समिति ने अनुच्छेद 320 के खंड (4) को उस प्रकार संशोधित न भी किया होता जिस प्रकार उस ने संशोधित किया है तो अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के लिये स्थान रक्षित करने के सम्बन्ध में किसी राज्य के लिये यह आवश्यक नहीं होता कि वह लोकसेवा-आयोगों से परामर्श करता। अनुच्छेद 335 का निर्देश किया

[पंडित हृदय नाथ कुंजरू]

गया है किन्तु वह सीमित रूप से ही प्रयोग में आयेगा। उस में केवल यह कहा गया है कि.....

***पंडित बालकृष्ण शर्मा:** क्या मैं माननीय सदस्य महोदय का ध्यान एक बात की ओर आकृष्ट कर सकता हूं? वे कहते हैं कि सरकार यह न समझे कि उस का यह कर्तव्य है कि वह लोकसेवा-आयोग से परामर्श करे किन्तु यदि वे अनुच्छेद 320 (3) (क) को देखें तो उन्हें ज्ञात हो जायेगा कि असैनिक सेवाओं में और असैनिक पदों के लिये भर्ती की रीतियों से सम्बद्ध समस्त विषयों पर लोकसेवा-अयोग से परामर्श करना होगा। इस का यह निर्वचन किया जा सकता है कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम-जातियों और अन्य पिछड़े हुए वर्गों के लिये स्थान रक्षित करने के सम्बन्ध में लोकसेवा-आयोग विवाद में पड़ सकते हैं। इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न न होने देने के लिये ही यह संशोधन उपस्थित किया गया है।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू:** मुझे विदित है कि खंड (3) में कौन से उपबन्ध हैं। मैं केवल यह निवेदन करना चाहता था कि खंड (3) के उपबन्ध अनुच्छेद 16 के खंड 4 के उपबन्धों के अधीन समझे जायें, विशेषतया जब कि उस में सोलहवां मूलाधिकार सन्निहित है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** वास्तव में वह एक आनुषंगिक खंड है।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू:** मैं यह स्पष्ट करने का प्रयास कर रहा था कि अनुच्छेद 320 के खंड (4) के सम्बन्ध में जो संशोधन उपस्थित किया गया है उस से राज्य को पिछड़े हुए वर्गों के लोगों के लिये स्थान रक्षित करने के बारे में कोई ऐसी शक्ति प्राप्त नहीं हो जाती जो उसे पहले प्राप्त नहीं थी।

श्रीमान, मैं अनुच्छेद 335 की चर्चा कर रहा था। उस में केवल यह कहा गया है कि प्रशासन कार्यपटुता बनाये रखने की संगति के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों के सदस्यों के दावों का ध्यान रखा जायेगा। जांच करन पर यह स्पष्ट हो सकता है कि बिना इन वर्गों के लोगों के लिये कुछ स्थानों को रक्षित किये हुए इन के दावों का ध्यान नहीं रखा जा सकता। इस लिये मेरे विचार से इस सम्बन्ध में अनुच्छेद 16 को अधिक महत्व दिया जाना चाहिये। मेरे विचार से अनुच्छेद 335 को उतने विस्तृत रूप से प्रयोग में नहीं लाया जा सकता जितने विस्तृत रूप में अनुच्छेद 16 को प्रयोग में लाया जा सकता है। हम अनुच्छेद 335 का यह अर्थ लगा सकते हैं कि राज्य को अनुसूचित जातियों और पिछड़ी हुई आदिम-जातियों के लिये स्थान रक्षित करने की शक्ति प्राप्त है। किन्तु, मेरे विचार से, अनुच्छेद 16 के खंड (4) में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि राज्य को पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग के पक्ष में नियुक्तियों या पदों के रक्षण की शक्ति होगी। यदि यह भी कहा जाता है कि अनुच्छेद 320 के खंड (4) को संशोधित

करने की आवश्यकता नहीं है तो फिर भी यह स्पष्ट है कि उस में सन्निहित शक्ति अनुच्छेद 16 द्वारा राज्य को प्रदत्त शक्ति से सुसंगत ही है और उस की आनुषंगिक शक्ति ही है।

***अध्यक्षः** हम बहस को कल जारी रखेंगे।

आज अपराह्न में जो वाद-विवाद हुआ था उस के सिलसिले में मैंने एक बार यह कहा था कि मैं चाहता हूं कि सभी संशोधनों की कार्यवाही को समाप्त कर दिया जाये किन्तु चूंकि इस अनुच्छेद में जितना समय हम लगाना चाहते थे उस से कुछ अधिक समय लग गया है इस लिये मैं अन्य संशोधनों को उपस्थित करने के लिये भी कुछ अधिक समय देना चाहता हूं।

***पंडित बालकृष्ण शर्माः** श्रीमान, सूची 1 में कुछ ऐसे संशोधन हैं जो सूची 2 में छपे हुए संशोधनों से सम्बद्ध हैं। इसलिये मुझे विश्वास है कि यदि सूची 1 के संशोधन निश्चित समय में उपस्थित नहीं किये जा सके तो आप कृपा कर के उन्हें भी उपस्थित करने की आज्ञा देंगे।

***अध्यक्षः** हम इस पर विचार करेंगे।

इसके पश्चात सभा मंगलवार तारीख 15 नवम्बर 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

———————